बी० ए० एवं बी० कॉम० (प्रतिष्ठा) तृतीय खंड

सामान्य अध्ययन

विषय सूची

ग्रुप A—भूगोल

	पाठ	पृष्ठ
1. भारत का भौतिक भूगोल–स्थिति, प्राकृतिक और नदियाँ	1	2
2. भारत की जलवायु, वनस्पति एवं मिट्टियाँ	2	5
3. राजनैतिक विभाग, सीमा एवं भारत की भू-राजनीति	3	9
4. कृषि एवं वन संसाधन	4	12
5. खनिज एवं औद्योगिक संसाधन	5	18
6. मानव संसाधन	6	24
7. जल संसाधन, मत्स्य एवं जल विद्युत	7	31

ग्रुप B—विज्ञान

	पाठ	पृष्ठ
8. जीवन क्या है ?	1	36
9. उर्वरक–कार्बनिक एवं अकार्बनिक	8	46

ग्रुप A—इतिहास

	पाठ	पृष्ठ
10. 1757 से 1857 तक भारतीय राजनीति का संक्षिप्त वर्णन	1	54
11. 19वीं शताब्दी में भारत में धार्मिक आन्दोलन–ब्रह्म समाज, आर्य समाज, रामकृष्ण मिशन एवं अलीगढ़ आन्दोलन	2	61
12. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना	2a	65
13. भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (1885-1947)	3	69
14. क्रांतिकारी आन्दोलन का उदय, स्वरूप तथा परिणाम	4	77
15. भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन (1905 से 1919)	4a	82
16. भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन (1919-1935)	4b	89
17. भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन (1935-1947)	4c	93
18. भारतीय स्वतन्त्रता आन्दोलन में गाँधीजी की भूमिका	5	100
19. स्वतन्त्रता प्राप्ति और देश का बँटवारा	6	105
20. भारतीय संविधान की विशेषताएँ–कार्यपालिका, व्यवस्थापिका एवं न्यायपालिका	7	111
21. स्वतंत्रता की प्राप्ति और विभाजन	7a	119

दूर शिक्षा निदेशालय, पटना विश्वविद्यालय

दूर शिक्षा निदेशालय, पटना विश्वविद्यालय डायरेक्टर (निदेशक) की लिखित अनुमति के बिना इस पुस्तिका के किसी भी अंश का पुनर्प्रकाशन नहीं होगा ।

ग्रुप A—भूगोल

भारत का भौतिक भूगोल–स्थिति, प्राकृतिक विभाग एवं नदियाँ

प्रमुख तथ्य–

नाम–भारतीय गणतन्त्र

राजधानी–नई दिल्ली

राष्ट्रीयता–भारतीय

भौगोलिक क्षेत्रफल–32, 87, 263 वर्ग कि० मी० ।

जनसंख्या–(1991 जनगणना)–84, 39, 30, 881

स्वतन्त्रता दिवस – 15 अगस्त

गणतन्त्र दिवस – 26 जनवरी

स्थिति – दक्षिण एशिया

भारत की स्थिति– भारत विश्व का सातवाँ बड़ा देश है । विश्व में चीन के बाद इसकी जनसंख्या सबसे अधिक है । भारत का पूरा क्षेत्र उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित है । यह 8° 4' उत्तरी आक्षांश से 37° 6' उत्तरी आंक्षाश के बीच स्थित है । यह पूर्वी गोलार्द्ध का देश है तथा इसका विस्तार 68° 7' पूर्वी देशान्तर से 97° 25' पूर्वी देशान्तर के बीच है । हिमालय पर्वत इसकी उत्तरी सीमा पर है । इसका दक्षिण विस्तार कन्याकुमारी तक है । भारत दक्षिण एशिया का सबसे बड़ा देश है ।

भारत एक प्रायद्वीप है, इसके पूर्व में बंगाल की खाड़ी, पश्चिम में अरब सागर तथा दक्षिण में हिन्द महासागर है । बंगाल की खाड़ी में अन्दमान-निकोबार द्वीप समूह तथा अरब सागर में लक्षद्वीप द्वीपसमूह स्थित है । अंदमान एवं निकोबार द्वीप समूह में 223 तथा लक्षद्वीप द्वीपसमूह में 27 द्वीप हैं । पहले के सात तथा दूसरे के 10 (दस) द्वीप बिना जनसंख्या के हैं । देश की अधिकतम लम्बाई (उत्तर से दक्षिण) 3214 कि० मी० चौड़ाई (पूर्व से पश्चिम) 2933 कि०मी० है । इसका कुछ क्षेत्रफल 32,87,263 वर्ग कि० मी० है । इसकी स्थल सीमा (अन्य देशों के साथ) 15200 कि० मी० तथा इसकी तट रेखा की लम्बाई 75160 कि० मी० है । इसमें भारत के द्वीप समूहों की तट रेखा भी सम्मिलित है ।

भारत के अनेक पड़ोसी राज्य हैं । इसके उत्तर-पश्चिम में पाकिस्तान और अफगानिस्तान, उत्तर में तिब्बत और चीन, पूर्व में बंगलादेश और म्यांमार (बर्मा) है । भारत का एक और पड़ोसी देश श्रीलंका भारत के दक्षिण में तथा भारत से पाक-जलडमरुमध्य द्वारा अलग है । अन्य सभी भारत के साथ स्थल सीमा बनाते हैं । थार-मरुस्थल भारत और पाकिस्तान के बीच स्थित है । हिमालय भारत और चीन तथा तिब्बत को अलग करता है । पटकोई, नागा तथा लुसाई की पहाड़ियाँ भारत को म्याँमार से अलग करती हैं ।

भारत के लगभग बीच से होकर कर्क रेखा 23½⁰ आक्षांश जाती है । जिन राज्यों से होकर कर्क रेखा जाती है वे राज्य हैं–गुजरात, राजस्थान, मध्यप्रदेश, बिहार, पश्चिम बंगाल, मिजोरम एवं त्रिपुरा । 82½0 पूर्वी देशान्तर भारत का मानक समय निर्धारित करता है । यह रेखा पूर्वी उत्तर प्रदेश, पूर्वी मध्य प्रदेश, द० प० उड़ीसा तथा उत्तरी-पूर्वी आन्ध्र प्रदेश होकर जाती है ।

भारत में 25 राज्य तथा 7 केन्द्र शासित प्रदेश हैं । अंडमान-निकोबार, चण्डीगढ़, दादर-नगरहवेली, दिल्ली, दमन और दीव, लक्ष द्वीप और पाण्डिचेरी केन्द्र शासित प्रदेश है । शेष भारत के राज्य हैं ।

प्राकृतिक विभाग–भारत के चार प्राकृतिक विभाग हैं–(i) हिमालय पर्वत माला, (ii) गंगा-ब्रह्मपुत्र का विशाल मैदान, (iii) दक्षिण का पठारी भाग तथा (iv) तटीय मैदान ।

(i) हिमालय पर्वतमाला : यह पर्वत माला भारत की उत्तरी सीमा पर स्थित है । इसकी लम्बाई 2400 कि० मी० तथा चौड़ाई 160-500 कि०मी० है । इसकी औसत ऊँचाई 2000 मीटर है । हिमालय पर्वतमाला की तीन श्रेणियाँ हैं ।

(क) उत्तरी श्रेणी–वृहत्-हिमालय या हिमाद्रि कहलाता है । इसका सर्वोच्च शिखर एवरेस्ट पर्वत 9848 मीटर हैं । नेपाल

में इसे सागर माथा कहते हैं । भारत की सीमा में हिमालय की सबसे ऊँची चोटी कंचनजंघा (8598) मीटर इसी हिमालय श्रेणी में सिक्किम की सीमा पर है । अन्य प्रमुख चोटियाँ मकालू (5481 मी०) नंगा पर्वत (8126) मी० तथा नन्दा देवी (7816 मी०) हैं । ये पर्वत सालों भर वर्फ से ढँके रहते हैं ।

(ख) मध्यवर्ती श्रेणी–लघु, मध्य हिमालय या हिमालय कहलाता है । इसकी औसत ऊँचाई 1800 मी० है । हिमालय के सभी स्वास्थ्यवर्द्धक केन्द्र तथा हिल स्टेशन इसी पर स्थित हैं । त्रिशूल और बदरीनाथ भी इसी पर स्थित हैं ।

(ग) बाहरी श्रेणी–शिवालिक हिमालय कहलाता है । इसकी ऊँचाई 900-1200 मीटर है । बिहार में सुमेश्वर श्रेणी इसी का भाग है । मध्य और बाहरी हिमालय के बीच 25 कि० मी० चौड़ी विस्तृत घाटी है जिसे दून घाटी कहा जाता है । कांगड़ा घाटी, देहरादून, बुटवाल घाटी इसके उदाहरण हैं ।

हिमालय के उत्तरी-पश्चिमी भाग को कश्मीर हिमालय, सिंधु और सतलज नदियों के बीच पंजाब हिमालय, सतलज और काली नदियों के बीच कूमायूँ हिमालय, काली और तिस्ता नदियों के बीच नेपाल-हिमालय तथा तिस्ता और ब्रह्मपुत्र नदियों के बीच असम हिमालय के नाम से जानते हैं । हिमालय उत्तर-पूर्व में जाकर दक्षिण की ओर मुड़ जाता है और म्याँमार में प्रवेश क़र जाता है । भारत की पूर्वी सीमा से लगी कई श्रेणियाँ हैं । इन्हें कुल मिलाकर पूवांचल कहते हैं । प्रमुख श्रेणियाँ उत्तर में पटकोई एवं नागा, दक्षिण में मीजो और लुसाई तथा मध्य में गारो, खासी और जैन्तियाँ की पहाड़ियाँ हैं । परन्तु हिमालय की भाँति न ही ऊँचे हैं और न उनका अधिक विस्तार ही हुआ है ।

हिमालय दीवार की भाँति है तथा इसे पार करना दुष्कर कार्य है । परन्तु इसमें कई दर्रे हैं जिनसे होकर हिमालय को पार किया जा सकता है । प्रमुख दर्रे हैं–खैबर, बोलन, गोमल, खुर्रम, शिपकी, नाथूला, बामडिला इत्यादि ।

(ii) भारत का विशाल मैदान–हिमालय पर्वत तथा दक्षिण के पठार के बीच भारत का विशाल मैदान स्थित है । यह मैदान पश्चिम में सिंधु की सहायक नदियों (मुख्यत: सतलज) मध्य में गंगा तथा उसकी सहायक नदियों तथा पूर्व में ब्रह्मपुत्र के द्वारा लाई गई मिट्टी से बना है । नदियों के द्वारा लाई गई मिट्टी से बनने के कारण इसे जलोढ़ का मैदान करते हैं । नदियों के कछारी भाग कुछ नीचे हैं । वहाँ बाढ़ आने से प्रत्येक वर्ष नई मिट्टी जमा होती है । नई मिट्टियों को 'खादर' कहते हैं, नदियों के कछारों के बीच कुछ ऊँची भूमि है । इस पर बाढ़ का पानी नहीं चढ़ता इसे 'बाँगर' कहते हैं । बाँगर भूमि पर पुरानी जलोढ़ तथा खादर पर नई जलोढ़ मिट्टियाँ पाई जाती है । हिमालय की तराई वाले भाग में जहाँ नदियाँ हिमालय से उतरकर मैदान में आती हैं वहाँ दलदल की एक संकीर्ण पेटी है । इसे 'भावर' कहते हैं यह घने साल के वनों से ढँका हुआ है । यह मैदान पश्चिम में अधिक ऊँचा है तथा इसकी ढाल दक्षिण-पूर्व की ओर है । मैदान के मध्यवर्ती भाग नीचा है जो गंगा से उत्तर और दक्षिण की ओर ऊँचा होता जाता है ।

(iii) दक्षिण भारत का पठार–पठार विशाल मैदान के दक्षिण में स्थित हैं । यह प्राचीन भू-खण्ड गोंडबाना लैंड का एक अंश हैं । प्राचीन तथा रूपान्तरित चट्टानों द्वारा निर्मित यह पठार लगभग 600 मीटर ऊँचा है ।

दक्षिण भारत का पठार तीन ओर पर्वतों से घिरा हुआ है । इसकी उत्तरी सीमा पर बिंध्याचल पर्वत श्रेणी है । पश्चिमी सीमा पर पश्चिमी घाट पहाड़ी तथा पूर्वी सीमा पर पूर्वीघाट पहाड़ी हैं । इनके अतिरिक्त उत्तर पश्चिम में अरावली पर्वत श्रेणी है जो गुजरात से दिल्ली तक चली गयी है । इन पर्वतों से घिरे अनेक पठार हैं । मालवा का पठार उत्तर पश्चिम में अरावली तथा दक्षिण में विंध्याचल पर्वत से घिरा है । इसकी पूर्वी सीमा बुन्देलखण्ड, बघैल खण्ड एवं छोटानागपुर है । विन्ध्याचल के दक्षिण भाग को दक्कन का पठार कहते हैं । यह त्रिभुजाकार पठार है । उत्तर में सतपुड़ा से लेकर दक्षिण में कन्याकुमारी तक चला गया है । पश्चिम में सहाद्रि, नीलगिरि, अनामलई तथा इलायची की पहाड़ियाँ हैं । इन्हें पश्चिमी घाटी पर्वत के नाम से जानते हैं । केरल में इसका सबसे ऊँचा शिखर अनामुड़ी 2695 मी० ऊँचा है । नीलगिरि की सबसे ऊँची चोटी दोदोबेटा है, उसकी ऊँचाई 2600 मीटर है । इसी पर दक्षिण का प्रमुख स्वास्थ्यवर्द्धक केन्द्र एवं मनोरम स्थल उड़मडलम (ऊटी) स्थित है, पठार की ढाल पूर्व की ओर है । पूर्वी सीमा पर पूर्वी घाट की कटी-छँटी पहाड़ियाँ हैं जो महेंद्रगिरि के नाम से जानी जाती हैं । प्रमुख पहाड़ियों में नालामलाई, पलनी शिवराम आदि हैं । पठार के पश्चिमी भाग में दक्कन का लावा का पठार है जिसका विस्तार, गुजारात, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र कर्नाटक एवं तमिलनाडु में हुआ है ।

मालवा के पटार के पश्चिमोत्तर भाग में थार का मरुस्थल है । यह बालू से ढँका हुआ है । यहाँ वनस्पति एवं नदियों का अभाव है । इसका विस्तार, पाकिस्तान तक चला गया है । यहाँ की जलवायु शुष्क एवं मानव निवास के लिए अनपयुक्त है ।

(iv) तटीय प्रदेश : दक्षिण के पठार की पूर्वी एवं पश्चिमी सीमा पर मैदानी भाग को तटीय प्रदेश कहते हैं । बंगाल की

खाड़ी से लगा पूर्वी तटीय भाग लगभग 100 कि० मी० चौड़ा एवं समतल है । बंगाल की खाड़ी में गिरने वाली नदियाँ यहाँ डेल्टा बनाती हैं । दक्षिणी तटीय भाग कोरोमंडल तट तथा उत्तरी भाग गोलकुण्डा तट कहलाता है । गोलकुण्डा तट का उत्तरी भाग उत्तरी सिरकार एवं दक्षिण भाग दक्षिणी सिरकार कहलाता है ।

अरब सागर से लगा मैदान पश्चिमी तटीय मैदान है । यह संकीर्ण मैदान है तथा काफी कटा-छँटा है । इसकी चौड़ाई लगभग 50 किलोमीटर है । तट से लगे अनेक लैगून हैं । इस तटीय मैदान के दक्षिणी भाग को मालाबार तट तथा उत्तरी भाग को कोंकण तट कहते हैं । उत्तर में यह गुजरात तट से मिल जाता है ।

भारत के द्वीप–भारत की मुख्य भूमि के अतिरिक्त यहाँ दो द्वीप-समूह भी हैं । बंगाल की खाड़ी में अंडमान और निकाबार तथा अरब सागर के लक्षद्वीप समूह हैं । अंडमान में कुल 204 छोटे द्वीप तथा निकोबार में 18 द्वीप हैं । पोर्टब्लेयर इसकी राजधानी है ।

लक्षद्वीप में कुल 27 द्वीप हैं । वे सभी मूंगे की पहाड़ियाँ हैं । यह केरल तट से 300 कि० मीटर की दूरी पर हैं। इसके 17 द्वीपों पर कोई आबादी नहीं है । काबारती इसकी राजधानी है ।

भारत की नदियाँ–

भारत अनेक नदियों का देश है । नदियों को दो भागों में रखते है–हिमालय की नदियाँ एवं पठारी भाग की नदियाँ । ग्लेशियर से निकलने के कारण हिमालय की नदियाँ हमेशा जल से भरी रहती है । मौनसूनी वर्षा के मौसम में जल की मात्रा बहुत बढ़ जाती है जिससे मैदानी भाग में बाढ़ आ जाती है । गंगा हिमालय से निकलने वाली नदियों में सबसे बड़ी नदी है।

गंगा गंगोत्री ग्लेशियर से गोमुख के निकट निकलती है । प्रारम्भ में इनका नाम भागीरथी हैं । रुद्र प्रयाग में अलकनन्दा से मिलने के बाद इसका नाम गंगा हो जाता है । हरिद्वार के निकट यह हिमालय से उतरकर मैदान में आ जाती है तथा पूरब की ओर मुड़ जाती है । राजमहल की पहाड़ी (बिहार) को पार करने के बाद यह दक्षिण की ओर मुड़ जाती है । बंगाल की खाड़ी में गिरने के पूर्व यह कई धाराओं में बँट जाती है । भारत से होकर बहने वाली एकमात्र धारा हुगली नदी है । शेष धाराएँ बंगला देश से होकर बहती हैं । अनेक धाराओं में बँटने के पूर्व गंगा का नाम पुनः भागीरथी हो जाता है । गंगा नदी विश्व का बड़ा डेल्टा बनाती है । इसे सुन्दरवन का डेल्टा भी कहते हैं ।

गंगा नदी की अनेक सहायक नदियाँ हैं । हिमालय से आकर मिलने वाली नदियों में यमुना सबसे बड़ी है । यह गंगा के पश्चिम से आती है तथा गंगा से इलाहबाद में आकर मिल जाती है । यह गंगा से दक्षिणी तट पर मिलती है । इसके बाएँ तट से जो नदियाँ आकर मिलती हैं वे हैं–गोमती (लखनऊ के निकट), सरयु (अयोध्या के निकट), घाघरा (छपरा के निकट), गंडक (पटना के निकट), कोसी (सहरसा के निकट) एवं महानन्दा (कटिहार) के निकट । ब्रह्मपुत्र भी गंगा की सहायक नदी है जो बंगला देश की सीमा में इससे मिलती है । दक्षिण से आकर मिलने वाली नदियाँ बरसाती हैं । चम्बल, बेतवा और केन नदियाँ मालवा के पठार से निकलकर यमुना नदी से मिलती है । मध्यप्रदेश की सोन नदी पटना के पश्चिम गंगा से मिल जाती है । पुनपुन और मयूराक्षी अन्य दो नदियाँ हैं । पश्चिम बंगाल में दामोदर भी रूप+नारायण के नाम से हुगली से जाकर मिलती है ।

ब्रह्मपुत्र हिमालय के उत्तर बहती हुई तिब्बत के पठार पर उतरकर पूर्व की ओर बहती है । इसका नाम चीन में शॉग-पो हैं । यह उत्तर-पूर्व में एकाएक तीखी मोड़ द्वारा पश्चिम की ओर मुड़कर भारत में प्रवेश कर जाती है । भारत में इसका नाम ब्रह्मपुत्र है । बंगला देश में यह प्रवेश कर यमुना के नाम से बहती है । ब्रह्मपुत्र की सहायक नदियाँ जो हिमालय से आती है उनमें सूबैत्री, कामेंग, धनश्री, मानस और तिस्ता प्रधान हैं । दक्षिण से आकर मिलने वाली नदियों में बूढ़ि दिहांग, कपोली और लोहित प्रधान है।

दक्षिण भारत में पाँच प्रधान नदियाँ हैं जो बंगाल की खाड़ी में मिलती हैं, वे हैं–

1. **सुवर्ण रेखा** : यह राँची के निकट से निकलकर छोटानागपुर तथा उड़ीसा में बहती हुई बंगाल की खाड़ी से मिलती है । रारू खरकई, वैतरनी ओर ब्रह्मणी इसकी प्रमुख सहायक नदियाँ हैं । स्वर्ण रेखा पर हुंडरू प्रपात है ।

2. **महानदी** : यह रायपुर के निकट से निकलकर पूर्व की ओर बहती हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है । इसका प्रवाह मध्य प्रदेश और उड़ीसा राज्यों में हैं । इसकी प्रमुख सहायक नदी शिवनाथ, हससुरा, मांद, जोक और तेल है । यह नदी डेल्टा बनाती है ।

3. **गोदावरी** : यह पश्चिमी घाट पर्वत से नासिक के निकट से निकलती हुई महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश और आंध्रप्रदेश बहती

हुई बंगाल की खाड़ी में गिरती है । दक्षिण भारत की सबसे बड़ी नदी प्रणाली है । पेनगंगा, वर्धा, प्राणहित, इन्द्रावती और शर्वती इसकी प्रधान सहायक नदियाँ हैं ।

4. **कृष्णा नदी :** यह पश्चिमी घाट के साथ भालेश्वर के निकट से निकलती है तथा महाराष्ट्र, मध्यप्रदेश तथा आंध्रप्रदेश बंगाल की खाड़ी में गिरती है । इसकी प्रधान सहायक नदियाँ कोयना, पंचगंगा, भीमा और तुँगभद्रा हैं ।

5. **कावेरी नदी :** यह दक्षिण भारत की सबसे पवित्र नदी है । कुर्ग से निकलने के बाद कर्नाटक तथा तमिलनाडु होते हुए बंगाल की खाडी में पहुँचती हैं । हेमवती, लोक पावनी, अक्राबली, लक्षमण तीर्थ तथा भवानी इसकी मुख्य सहायक नदियाँ हैं ।

अरब सागर में गिरने वाली भारत की कुछ नदियाँ निम्नलिखित हैं–

1. **नर्मदा नदी :** यह मध्यप्रदेश में अमरकंटक से निकलती है तथा खम्भात की खाड़ी में गिरती है । इसके उत्तर में विन्ध्याचल पर्वत तथा दक्षिण में सतपुड़ा की पहाड़ियाँ हैं ।

2. **ताप्ती नदी :** यह नर्मदा के दक्षिण में उसके समानान्तर बहती हुई सम्भात की खाड़ी में गिरती हैं । यह सतपुड़ा से निकलती है । पुराना इसकी एकमात्र सहायक नदी है ।

दक्षिण भारत की अन्य नदियाँ जो पश्चिम घाट पर्वत से निकलती हैं, वे सभी अरब सागर में गिरती हैं, वे निम्नलिखित हैं :

गोआ–माँडवी एवं जुआरी नदियाँ ।

कर्नाटक–कालिन्दी, शवती और वेत्रवती । भारत का सबसे ऊँचा जलप्रपात जोग (27.1 मीटर) शर्वती नदी पर है ।

केरल-पोनर, पेरियार एवं पम्बा नदियाँ ।

उपर्युक्त नदियों के अतिरिक्त अरावली के मेवाड़ से निकलने वाली सावरमती दक्षिण की ओर बहती हुई खम्भात की खाड़ी में गिरती है । मरुस्थल से होकर जाने वाली एक नदी लुनी नदी है । यह अजमेर के निकट से निकलती है तथा मरुस्थल को पार कर अरब सागर में गिरती है ।

कुछ प्रमुख आँकड़े

हिमालय की चोटियाँ एवं ऊँचाई			भारत की प्रमुख नदियों की लम्बाई		
काराकोरम	8611	मीटर	ब्रह्मपुत्र	2900	किलोमिटर
कंचनजंगा	8598	,,	गंगा	2510	,,
नंगा पर्वत	8126	,,	गोदावरी	1450	,,
नन्दा देवी	7817	,,	नर्मदा	1290	,,
त्रिशूल	7128	,,	कृष्णा	1290	,,
			महानदी	810	,,
			कावेरी	760	,,

□□□

पाठ–2

भारत की जलवायु, वनस्पति एवं मिट्टियाँ

भारत की जलवायु मौनसूनी है । मौनसून शब्द अरबी भाषा के मौसम शब्द से उत्पन्न हुआ है जिसका अर्थ ऋतु होता है । इसका प्रयोग अरब के नाविक अरब सागर पर चलने वाली उन हवाओं के लिए करते थे जो ऋतु परिवर्तन के साथ-साथ अपनी दिशाएँ बदल देती थीं । भारत में बोल-चाल की भाषा में मौनसून से वर्षा ऋतु का बोध होता है तथा अच्छा मौनसून का अर्थ अच्छी वर्षा समझी जाती है । हिन्द महासागर में इन हवाओं की दिशा 6 महीने दक्षिण पश्चिम और 6 महीने उत्तर-पूरब रहती है । इन हवाओं को दक्षिण-पश्चिमी और उत्तर-पूर्वी मौनसून हवा कहते हैं ।

भारत में सामान्यत: तीन ऋतुएँ होती हैं–

शीत ऋतु–नवम्बर से फरवरी महीने तक, यह वर्षा हीन है ।

ग्रीष्म ऋतु–मार्च से जून के प्रारम्भ तक, भीषण गर्मी एवं शुष्क होता है ।

वर्षा ऋतु–जून के आरम्भ से अक्टूबर तक, खूब वर्षा होती है ।

शीत ऋतु–इस समय सूर्य दक्षिणी गोलार्द्ध में रहता है । इसलिए दक्षिण भारत की अपेक्षा उत्तरी भारत ठंढ़ा रहता है । तापमान दक्षिण से उत्तर कम होता जाता है । जनवरी में दक्षिण भारत का तापमान औसत 20^0 से० तथा उत्तरी भारत का तापमान 10^0 से० रहता है । इस समय शीत लहरी चलती है । भारत का तापमान 0^0 से० से नीचे भी चला जाता है । हिलालय के क्षेत्र में भी तापमान 0^0 से० से कम रहता है । उस समय भारत के दो भागों में वर्षा होती है–उत्तरी-पश्चिमी भारत में चक्रवातों से वर्षा होती है जो भूमध्यसागर से इराक, ईरान तथा पाकिस्तान होते हुए भारत पहुँचती है । यह रब्बी फसलों के लिए लाभदायक हैं । कुल वर्षा 5-10 सेन्टीमीटर होती है ।

दक्षिणी पूर्वी भारत में उत्तर-पूर्वी मौनसून से वर्षा होती है । हवाएँ बंगाल की खाड़ी के ऊपर से गुजरने के कारण नमी धारण कर लेती हैं तथा वर्षा देती है । तमिलनाडु, कर्नाटक तथा केरल के कुछ भाग में इससे वर्षा होती है । इससे कुछ वर्षा 40-50 से० मी० तक होती है ।

ग्रीष्म ऋतु–जब सूर्य विषुवत रेखा को पारकर उत्तर की ओर बढ़ता है तो भारत में गर्मी का मौसम प्रारम्भ हो जाता है । गर्मी का मौसम मार्च से प्रारम्भ होकर जून के मध्य तक रहता है । दक्षिण भारत में पठार की उँचाई तथा समुद्र की निकटता के कारण गर्मी कम पड़ती है किन्तु उत्तरी मैदान में गर्मी अधिक पड़ती है । औसत तापमान 35^0 सेल्सियस रहता है, परन्तु दिन का तापमान $43\text{-}45^0$ सेल्सियस तक पहुँच जाता है । इस समय सूखी तथा धूल भरी गर्म हवा चलती है । इसे 'लू' कहते हैं । लू के कारण पेड़ पौधे सूखने लगते हैं । तालाब और कुएँ भी सूख जाते हैं । कभी-कभी जब बंगाल की खाड़ी में चक्रवात उठते हैं तो उससे आन्ध्रप्रदेश, उड़ीसा, बिहार तथा पश्चिमी बंगाल में वर्षा होती है तथा गर्मी से कुछ समय के लिए राहत मिलती है । ऐसे चक्रवातों को "नॉर-वेस्टर" कहते हैं । आम की फसल के लिए यह लाभदायक है, इसलिए इसे आम की बौछार कहते हैं ।

वर्षा ऋतु–यह भारत में जून से अक्टूबर तक का मौसम है । जून के प्रारम्भ तक गर्मी बढ़ती जाती है, परन्तु आधे जून के मौसम बिल्कुल बदल जाता है । हवा तेजी के साथ दक्षिण पश्चिम दिशा से बहने लगती है । आकाश बादलों से भर जाता है और गर्जन-तर्जन (तड़क) के साथ बड़े जोरों की वर्षा होती है । इस हवा को दक्षिण पश्चिम मौनसून हवा कहते हैं । यह हवा दक्षिण भारत तथा उत्तरी पूर्वी भारत में । जून, गोवा तथा असम में 5 जून, बम्बई तथा पश्चिमी बंगाल में 10 जून तक पहुँचती है । इस प्रकार आगे बढ़ती हुई । जुलाई तक पूरे भारत में पहुँच जाती है । इस हवा से पूरे भारत में व्यापक वर्षा होती है । सबसे अधिक वर्षा उत्तरी-पूर्वी भारत तथा पश्चिम घाट पर्वत के घाट पश्चिम भाग में होती है । इस पर्वत के पूर्वी भाग वृष्टि छाया में पड़ जाते हैं, जिससे बहुत कम वर्षा होती है । भारत के पठारी भाग में साधारण वर्षा (100 से० मी०) होती है । मैदानी भाग में ज्यों-ज्यों पश्चिम की ओर बढ़ते हैं, वर्षा कम होती जाती है । दिल्ली में 75 से०मी० पंजाब में 50 से० मी० तथा राजस्थान में 25 से० मी० से कम वर्षा होती है । इस प्रकार भारत में वर्षा के निम्न प्रदेश उभरते हैं–

1. 200 से० मी० या अधिक वर्षा– पश्चिम घाट तथा पश्चिमी तट, असम, हिमालय की दक्षिणी ढाल तथा पश्चिमी बंगाल के कुल भाग ।

2. 100 से 200 सेमी –पश्चिमी घाट की पूर्वी ढाल, तमिलनाडू का पूर्वी किनारा, प० बंगाल, बिहार, उड़ीसा, मध्य प्रदेश का पूर्वी भाग एवं हिमालय की तराई ।

3. 50 से 100 सेमी–दक्षिण भारत के अधिकांश भाग तथा गंगा के मैदान ।

4. 50 सेमी से कम–पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, उत्तरी गुजरात ।

इस तरह हम देखते हैं कि वर्षा के ये विभाग अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं । यह न केवल प्राकृतिक वनस्पति, बल्कि कृषि को भी प्रभावित करता है । यहाँ की कुल वर्षा का लगभग 80% द० प० मानसून हवा से जून और सितम्बर के महीनों में होती है ।

भारतीय वर्षा की विशेषताएँ–

1. भारत में वर्षा का प्रादेशिक वितरण असमान है । कहीं अत्यधिक तो कहीं बहुत कम वर्षा होती है ।

2. वर्षा साल के 4-5 महीनों तक सीमित है । बाकी महीना शुष्क रहते हैं ।

3. वर्षा मुख्यत: द० प० मौनसून से होती है ।

4. किसी वर्ष मौनसून से अच्छी तो किसी वर्ष कम वर्षा होती है ।

5. भारतीय मौनसून में भारी अनिश्चितता पाई जाती है ।

वापसी मौनसून (रिट्रीटिंग मौनसून) : भारत में जून से अगस्त तक मौनसून प्रभावकारी रहता है । सितम्बर से मौनसून वापस होने लगता है । इसका अर्थ यह है कि मौनसून अब उत्तरी-पश्चिमी भारत नही पहुँच पाता, बीच में ही रुक जाता है । 15 सितम्बर को यह उत्तर प्रदेश, 25 सितम्बर को बिहार, 15 अक्टूबर को बंगाल तथा असम तथा 1 नवम्बर तक पूरे भारत से निकल जाता है । इसके लौट जाने के बाद भारत में शीत ऋतु प्रारम्भ हो जाती है ।

वर्षा तथा कृषि–भारत में वर्षा तथा कृषि में गहरा संबंध है । अत: यहाँ की कृषि की निम्नलिखित विशेषताएँ पाई जाती हैं–

1. चूँकि भारत में जून से सितम्बर तक वर्षा होती है, अत: यही पाँच महीने कृषि कार्य के लिए उपयुक्त हैं ।

2. अन्य महीनों में वहीं खेती होती है जहाँ सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है ।

3. जहाँ अधिक वर्षा होती है वहाँ धान, जूट, गन्ना, मकई इत्यादि की खेती होती है । पर जहाँ वर्षा कम होती है वहाँ गेहूँ, ज्वार, बाजरा, अन्य मोटे अनाज, कपास आदि का उत्पादन होता है ।

4. जाड़े के दिनों में गेहूँ, तेलहन की व्यापक खेती होती है ।

5. वर्षा कम होने के कारण घास सूख जाती है । पशुओं के लिए चारे की कमी हो जाती है ।

भारत में प्राकृतिक वनस्पति एवं वन

भारत में वर्षा तथा वनस्पति में गहरा संबंध है । वर्षा प्रदेश के अनुरूप यहाँ वनस्पति मिलती है । यहाँ मुख्य रूप से छ: प्रकार की वनस्पतियाँ मिलती हैं । इनमें चार वर्षा से संबंधित हैं तथा दो स्थलाकृति अथवा समुद्र की सतह की ऊँचाई से ।

1. चिरहरित वन : यह वनस्पति वहाँ पायी जाती है जहाँ वार्षिक वर्षा 200 से०मी० से अधिक होती है । ये जंगल विषुवत रेखीय जंगल की तरह होते हैं । ये महाराष्ट्र, कर्नाटक तथा केरल, अण्डमान-निकोबार तथा असम की पहाड़ियों में 103 मी० की ऊँचाई तक मिलते हैं । वृक्षों की ऊँचाई 30-50 मी० तक होती है । प्रमुख वृक्षों में साल, रोजउड, एबोनी, आयरनउड और बाँस हैं । इन वृक्षों की लकड़ियाँ कड़ी होती हैं । अत: उनका आर्थिक महत्त्व कम है ।

2. पतझड़ मौनसून वन : यह वन उन प्रदेशों में मिलता है जहाँ वार्षिक वर्षा 100-200 से०मी० होती है । यह मुख्यत: पश्चिमी घाट के पूर्वी ढाल, पूर्वी घाट, छोटानागपुर, पूर्वी मध्य प्रदेश, उड़ीसा तथा हिमालय के तराई भागों में पाया जाता है । इस प्रकार के जंगल की विशेषता यह है कि वृक्ष गर्मी के आरम्भ में अपनी पत्तियाँ गिरा देते हैं । आर्थिक दृष्टि से भारत का यह महत्त्वपूर्ण जंगल है । सागवान, शीशम, महुआ, चन्दन आदि प्रमुख वृक्ष हैं । वृक्षों की ऊँचाई 25-33 मी० तक होती है ।

3. शुष्क पतझड़ वन : इस प्रकार का वन मुख्यत: प्रायद्वीपीय भारत (मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक) तथा उत्तरप्रदेश तथा पूर्वी राजस्थान में मिलता है जहाँ 50-104 से०मी० वर्षा होती है । इसमें काँटेदार झाड़ियाँ तथा छोटे-छोटे पेड़ मिलते हैं । बबूल और गोंद उत्पन्न करने वाले वृक्ष प्रधान हैं । नीम, शीशम, पीपल, ताड़ अन्य वृक्ष हैं । नदियों के किनारे बाँस की झाड़ियाँ मिलती हैं ।

4. अर्द्धमरुस्थलीय वनस्पति : जिन भागों में 50 से०मी० से कम वर्षा होती है । यहाँ वनस्पति नाम मात्र की होती है । केवल वहाँ कँटीली झाड़ियाँ ही उगती हैं । वृक्षों में केवल खजूर के पेड़ मिलते हैं । यह वनस्पति राजस्थान, पंजाब तथा दक्षिण पठार के वृष्टि छाया प्रदेशों में मिलती है ।

5. ज्वारीय वन : यह समुद्र के किनारे दलदली क्षेत्रों में पाया जाता है । इस प्रकार के जंगल को मैनग्रोव जंगल कहा जाता है । इसका सबसे विस्तृत क्षेत्र गंगा की डेल्टा में मिलता है जो सुन्दर वन के नाम से प्रसिद्ध है । यहाँ की प्रमुख वनस्पति सुन्दरी नामक वृक्ष है । इसे जलावन के काम में लाया जाता है । गोदावरी तथा कृष्णा नदियों के डेल्टा में भी इस प्रकार का जंगल पाया जाता है ।

6. पर्वतीय वन : हिमालय पर्वत पर ऊँचाई के साथ-साथ वनों में अन्तर मिलता है । 900 मीटर की ऊँचाई तक पतझर वन मिलते हैं । 900-1800 मीटर की ऊँचाई पर चौड़ी पत्ती वाला सदाबहार वन पाया जाता है । पूर्वी हिमालय में ओक और चेस्टनट तथा पश्चिमी हिमालय में चेस्टनट, पोपलर, चीड़ इत्यादि प्रधान हैं । 1800-2700 मीट की ऊँचाई पर समशीतोष्ण वन मिलते हैं। इसमें शंकुलवन (कॉनिफेरस) की प्रधानता है । प्रमुख वृक्षों में चीड़, स्प्रूस, देवदार, सिल्वर फर, जुनियर बर्च आदि प्रधान हैं । पर्वतीय

वन की लकड़ियाँ हल्की और मुलायम होती हैं । अतः उनका भारी आर्थिक महत्त्व है । 2700 मीटर से अधिक ऊँचाई पर अत्यधिक ठंढक के कारण केवल घास उगती हैं । कुछ सिल्वर फर, जुनिफर और बर्च के वृक्ष मिलते हैं जिन्हें अल्पाइन वृक्ष कहते हैं । घास के मैदान कश्मीर में 'मर्ग' कहलाते हैं जैसे गुलमर्ग, सोनमर्ग इत्यादि ।

भारत में मात्र 22.1 प्रतिशत क्षेत्र पर ही वन है जबकि पारिस्थितिक संतुलन के लिए 33% वन का होना आवश्यक है। इसमें भी केवल 11% सही रूप में वन कहे जा सकते हैं । विगत वर्षों में वनों की इतनी कटाई की गई है कि अब बहुत कम वन बच गए हैं । इससे वनों से प्राप्त होने वाली वस्तुओं में कमी होती जा रही है ।

वनों के अनेक उपयोग हैं । इनसे इमारती लकड़ियाँ प्राप्त होती हैं । लोगों का जलावन प्राप्त होता है । बाँस एवं सावे घास कागज उद्योग के काम में आते हैं । इसमें दियासलाई के लिए भी लकड़ियाँ मिलती हैं । खैर लकड़ी उद्योग से कत्था बनाया जाता है । चन्दन की लकड़ी से सुगन्धित तेल प्राप्त होता है । लकड़ी से कलात्मक वस्तुएँ बनाई जाती हैं । महुआ के फूल से शराब बनायी जाती है । वृक्षों पर रेशम के कीड़े पाले जाते हैं । इनके अतिरिक्त वनों से बीड़ी के लिए पत्तियाँ, अनेक प्रकार की जड़ी बूटियाँ, जानवरों के लिए घास तथा चमड़ा पकाने और रंगने के सामान भी प्राप्त होते हैं ।

भारत की मिट्टियाँ

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के वैज्ञानिकों ने मिट्टियों को छः प्रधान समूहों में बाँटा है । ये निम्नलिखित हैं–

1. **जलोढ़ मिट्टी :** नदियों के कछारी भाग में जलोढ़ मिट्टियाँ पाई जाती हैं । हिमालय पर्वत और दक्षिणी पठार के बीच गंगा–ब्रह्मापुत्र के विशाल मैदान जलोढ़ मिट्टी से निर्मित है । दक्षिण भारत की नदियों के डेल्टा में भी जलोढ़ मिट्टी मिलती है । गंगा के मैदान में पुरानी जलोढ़ को 'बांग' तथा नई जलोढ़ को 'खाबर' कहते हैं । जलोढ़ मिट्टी के कण बारीक होते हैं तथा वे अत्यन्त उपजाऊ हैं । बांगर में चीका (पांक मिट्टी) और बालू के अंश समान होते हैं । अतः इन्हें दोमट मिट्टी कहा जाता है । खादर में चीका की मात्रा अधिक होती है । बाढ़ वाले क्षेत्र में ऐसी मिट्टी मिलती है । इस मिट्टी में चावल, मकई, चना, गन्ना, जूट आदि उपजते हैं ।

2. **काली मिट्टी :** यह लावा से बनी मिट्टी है । गुजरात, मध्य प्रदेश, आंध्रप्रदेश और तमिलनाडु में इस प्रकार की मिट्टी पायी जाती है । भारत में इसका विस्तार 5 लाख वर्ग किलोमीटर से अधिक क्षेत्र पर है । इस मिट्टी में कपास की खेती अधिक होती है, इसलिए इसे काली कपासी मिट्टी कहते हैं । इस मिट्टी में गन्ना, ज्वार और तेलहन की भी भारी खेती होती है । इस मिट्टी में नमी धारण की क्षमता अधिक होती है ।

3. **लाल-पीली मिट्टी :** प्रायद्वीपीय भारत में रूपांतरित चट्टानों से बनी मिट्टी लाल-पीली मिट्टी कहलाती है । लोहे के अंश के कारण इसका रंग लाल या पीला होता है । वस्तुतः यह बालू प्रधान मिट्टी होती है । भारत के 2 लाख वर्ग किलोमीटर क्षेत्र पर इसका विस्तार है । यह मिट्टी उपजाऊ कम होती है । इसमें मुख्यतः मोटे अनाज उपजते हैं । निचले भागों की मिट्टी सामान्य उपजाऊ होती है ।

4. **लैटेराइट मिट्टी :** जहाँ की जलवायु गर्म एवं आर्द्र है वहाँ पठारी भाग में इस प्रकार की मिट्टी मिलती है । पहाड़ियों के ऊपरी भाग में इसके अधिक क्षेत्र हैं । इस मिट्टी में लोहा और अल्युमिनियम प्रधान है । पूर्वी घाट की पहाड़ियों, पश्चिमी घाट के शीर्ष भाग तथा असम की पहाड़ियों के ऊपर भी लैटेराइट मिट्टी मिलती है । यह मिट्टी उनुपजाऊ होती है तथा इस पर वनस्पति भी कम उगती है । इस मिट्टी का रंग लाल होता है तथा उसमें ग्रंथियाँ (Nodules) होती हैं।

5. **मरुस्थलीय मिट्टियाँ :** शुष्क और अर्द्धशुष्क जलवायु प्रदेश में मरुस्थलीय मिट्टियाँ मिलती हैं । इस प्रकार की मिट्टी में बालू की प्रधानता होती है । राजस्थान में इसे 'भूर' मिट्टी कहते हैं । पोषक तत्त्वों में कमी के कारण यह मिट्टी अनुपजाऊ होती है । परन्तु जहाँ सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है, वहाँ अनेक फसलें जैसे ज्वार, बाजरा, तिल, कपास, गेहूँ आदि की खेती होती है।

6. **पर्वतीय मिट्टियाँ :** हिमालय पर्वत की ऊँची-नीची ढालों पर पर्वतीय मिट्टियाँ मिलती हैं । ऐसी मिट्टियाँ बलुई होती हैं तथा पोषक तत्त्वों के वर्षा के जल के साथ दह जाने के कारण बहुत कम उपजाऊ होती है । मिट्टी में जैविक तत्त्वों की मात्रा अधिक होती है । निचली ऊँचाई पर घने वन उगते हैं । परन्तु अधिक ऊँचाई पर इन मिट्टियों में केवल घास उगती हैं । 3000 मीटर से अधिक ऊँचे भाग में मिट्टी बहुत बनती है ।

□□□

राजनैतिक विभाग, सीमा एवं भारत की भू-राजनीति

भारत गणतन्त्र में 25 राज्य एवं सात केन्द्र शासित प्रदेश हैं । क्षेत्रफल की दृष्टि से वे निम्नलिखित क्रम में है।

राज्य	क्षेत्रफल (वर्ग कि०मी०)	जनसंख्या
1. मध्यप्रदेश	443,556	66,135,862
2. राजस्थान	342,239	43,880,640
3. महाराष्ट्र	307,690	78,706,779
4. उत्तर प्रदेश	249,411	138,760,417
5. आन्ध्र प्रदेश	275,068	86,304,854
6. जम्मू कश्मीर	222,068	7,718,700
7. गुजरात	190,624	41,174,000
8. कर्नाटक	191.791	44,817,398
9. बिहार	173,877	86,338,853
10. उड़ीसा	155,707	31,512,070
11. तमिलनाडु	130,058	55,638,318
12. पं० बंगाल	88,752	67,982,732
13. अरुणाचल प्रदेश	88,743	858,392
14. असम	78,438	22,294,562
15. हिमाचल प्रदेश	55,673	5,111,079
16. पंजाब	50,362	20,190,795
17. हरियाणा	45,212	16,317,715
18. केरल	38,863	29,011,237
19. मेघालय	22,429	1,760,626
20. मणिपुर	22,327	1,826,714
21. मिजोरम	21,081	686,217
22. नागालैंड	10,579	1,215,573
23. त्रिपुरा	10,486	2,744,827
24. सिक्किम	7.096	403,612
25. गोवा	3,702	1,007,749
केन्द्र-शासित प्रदेश	क्षेत्रफल (वर्ग) किमी०)	जनसंख्या
1. अंडमान और निकोबार द्वीप-समूह	8249	277,989
2. दिल्ली	483	9,370,475
3. पांडिचेरी	492	789,416
4. दादर एवं नगर हवेली	491	138,542

5. चंडीगढ़	114	640,725
6. दमन एवं दीव	112	101,439
7. लक्षद्वीप	32	51,681

जनसंख्या की दृष्टि से उत्तर प्रदेश सबसे बड़ा राज्य है । सिक्किम जनसंख्या की दृष्टि से सबसे छोटा राज्य है ।

सीमा-भारत के सीमावर्ती क्षेत्र में अनेक राज्य हैं । पाकिस्तान की सीमा से लगे राज्य हैं–गुजरात, राजस्थान, पंजाब तथा जम्मू और कश्मीर । चीन की सीमा से लगे राज्य जम्मू कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, उत्तर प्रदेश, सिक्किम और अरुणाचल प्रदेश हैं । उत्तर प्रदेश और बिहार की सीमा नेपाल से मिलती है । अरुणाचल और असम की सीमा भूटान से लगी हुई है । म्याँमार (बर्मा) से लगी भारत की सीमा पर नागालैंड, मिजोरम हैं । बंगलादेश की सीमा पर प० बंगाल, असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम हैं ।

भारत के राज्यों को कई क्षेत्रों में बाँटा गया है । वे निम्नलिखित हैं–

1. पूर्वी राज्य : पश्चिमी बंगाल, असम, मेघालय, अरुणाचल प्रदेश, मणिपुर, मिजोरम, त्रिपुरा, नागालैंड एवं सिक्किम ।
2. उत्तरी राज्य : बिहार, उत्तर प्रदेश, जम्मू-कश्मीर, हिमाचल प्रदेश, पंजाब एवं हरियाणा ।
3. पश्चिमी राज्य : राजस्थान, गुजरात एवं महाराष्ट्र ।
4. मध्य राज्य : मध्य प्रदेश
5. दक्षिणी राज्य : आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडु, कर्नाटक एवं केरल ।
6. द्वीपीय प्रदेश : अंडमान और निकोबार तथा लक्षद्वीप ।

भू-राजनीति

1. भारत की स्थिति का भू-राजनीतिक महत्त्व :

वर्तमान समय में भारत की भौगोलिक स्थिति की निम्नलिखित भू-राजनीतिक विशेषताएँ हैं–

1. भारत की भौगोलिक स्थिति पुरानी दुनिया के केन्द्र में रही है । यह एशिया महादेश के दक्षिण में सघन आबाद देश है ।

2. हिन्द महासागर के सन्दर्भ में इसकी स्थिति अधिक महत्त्वपूर्ण है । यह एशिया और यूरोप के बीच अन्तर्राष्ट्रीय व्यापारिक मार्ग पर स्थित है । स्वेज मार्ग के खुल जाने के कारण इसकी स्थिति अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार की जीवन रेखा के निकट रही है ।

3. वर्तमान राजनीतिक, भौगोलिक समस्याओं के सन्दर्भ में भारत उत्तर-पश्चिम में विरोधी पाकिस्तान तथा हिमालयके उत्तर में शक्तिशाली चीन से घिरा है ।

4. भू-राजनैतिक दृष्टिकोण से भारत चीन को छोड़कर कमजोर एवं गरीब पड़ोसियों से घिरा है । इसके चतुर्दिक विभिन्न महाशक्तियों के लिप्त होने की सम्भावनाएँ प्रबल रही हैं ।

5. भारत की भौगोलिक स्थिति के कारण ही बहुत सी राजनीतिक, भौगोलिक समस्याओं का जन्म हुआ है । जैसे–कश्मीर समस्या, भारत-चीन सीमा-विवाद, बंगलादेश से प्रवासियों की समस्या, नदीजल-विवाद इत्यादि ।

भू-राजनैतिक समस्या (आंतरिक)

1. कश्मीर समस्या : कश्मीर समस्या राष्ट्रीय एकीकरण की सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण समस्या है । ब्रिटिश औपनिवेशिक काल से इसकी एक स्वतन्त्र पहचान रही है । यहाँ मुस्लिम जनसंख्या अधिक है परन्तु यह हिन्दू शासकों द्वारा शासित रही है । स्वतन्त्रता के बाद भारत में इसका विलय हुआ और धारा 370 का प्रावधान करके इसे एक विशेष दर्जा प्रदान किया गया है । इसके अन्तर्गत यहाँ के मुख्य मंत्री को प्रधान मंत्री, ऑल इण्डिया रेडियों को 'रेडियो कश्मीर' तथा देश के अन्य क्षेत्रों के लोगों द्वारा अचल सम्पत्ति क्रय न कर सकना आदि सुविधाएँ प्रदान की गयी हैं । परिणामस्वरूप यहाँ की मुस्लिम जनसंख्या में क्षेत्रीयता की भावना का प्रचार हुआ है । पाकिस्तान के हस्तक्षेप से यह स्थिति और जटिल होती गई ।

2. खालिस्तान की समस्या : कश्मीर समस्या के बाद देश की यह सबसे बड़ी समस्या है । पंजाबी भाषा पर आधारित पंजाब राज्य का नामकरण 1966 ई० में हुआ । यद्यपि ब्रिटिश काल से ही अकाली समाज के रूप में इसकी पहचान रही है । क्षेत्रीय नेताओं की राजनीतिक महत्त्वाकांक्षाओं के कारण खालिस्तान के रूप में अलग राज्य प्राप्त करने का नारा बुलन्द किया गया, पिछले दशक में तो यह समस्या और भी गंभीर हो गई । यहाँ पाकिस्तान द्वारा उग्रवादियों को प्रशिक्षण एवं बढ़ावा दिया जा रहा है । पाकिस्तान के हस्तक्षेप से महत्वाकांक्षाओं ने इसको सर्वाधिक विकराल समस्या के रूप में स्थापित कर दिया ।

3. **गोरखालैंड की समस्या :** पश्चिमी बंगाल के उत्तरी भागों-दार्जिलिंग, सिलीगुड़ी और कूच बिहार को मिलाकर गोरखालैंड की माँग भी इस सीमांतीय क्षेत्र में राष्ट्रीय एकता के लिए एक समस्या बन गई है । भौगोलिक रूप से यह पहाड़ी क्षेत्र सीमान्त उपयोग का ही रहा है । चाय बगान और पर्यटन उद्योग ही यहाँ की अर्थव्यवस्था के आधार हैं । यहाँ परम्परागत रूप में नेपाली मूल के गोरखे, लेप्चा, मरिया और तिब्बती शरणार्थी रहते हैं । गोरखा समुदाय की बहुलता के कारण हाल के वर्षों में क्षेत्रीय स्वायत्तता की बढ़ती माँग के कारण इन्हें स्वायत्तता प्रदान की गई है । अभी यहाँ शान्ति स्थापित है ।

4. **असम की समस्या :** आर्थिक व्यवस्था, धर्म, प्रजाति, संस्कृति आदि कारणों से पूर्वी राज्यों में भी उग्रवाद बढ़ा है । सबसे अधिक समस्या असम में हैं । यहाँ बोडोलैण्ड की माँग को लेकर उल्फा आन्दोलन दिन-प्रतिदिन जोर पकड़ता जा रहा है । यह माँग भी आर्थिक असन्तुलन के कारण हुआ है । इनके अतिरिक्त बंगलादेश से घुसपैठ कर आयी मुस्लिम जनसंख्या भी एक समस्या बनी हुई है । प्राय: असम की जनसंख्या की इनके विरोध में लड़ाई होती रही है । सैनिक कार्रवाई के कारण तथा सरकार द्वारा अपनाई गई उदार नीतिके कारण अभी उग्रवाद कुछ दबा हुआ है ।

5. **झारखंड की समस्या :** प्राकृतिक दृष्टिकोण से भारत का खनिज और वन संसाधनों में सबसे सम्पन्न एक नया प्रान्त क्षेत्र झारखण्ड ही है । आज दक्षिणी बिहार, पूर्वी मध्यप्रदेश, उत्तरी उड़ीसा एवं पश्चिमी बंगाल के कुछ भागों को सम्मिलित कर बनाने की माँग की जा रही है । झारखण्ड का यह आन्दोलन झारखंड मुक्ति मोर्चा द्वारा चलाया जा रहा है जिसका केन्द्र सिंहभूम जिला है । प्राय: यहाँ का आर्थिक विकास केन्द्रीकृत है । यहाँ बाह्य जनसंख्या का वर्चस्व हैं । स्थानीय जनसंख्या की कोई भागीदारी नहीं हैं । एक तरह से वह अपने आधार से कटी हुई है । आर्थिक विकास की यह प्रवृत्ति, ईसाई धर्म का प्रचार, धर्म के आधार पर आदिवासियों में क्षेत्रीयता का उभार आदि कारण इस सममस्या के जनक हैं । वर्त्तमान समय में झारखंड के रूप में अलग राज्य की माँग करना इन्हीं कारणों का परिणाम है जिसकी पूत्ति हो गई है ।

भू-राजनीतिक समस्याएँ (अन्तर्राष्ट्रीय)

1. **भारत-चीन सीमा विवाद :** भारत और चीन के बीच लगभग 4200 कि०मी० लंबी सीमा है । यह एक पर्वतीय सीमा है जो पश्चिमोत्तर भाग के गिलगिट और लद्दाख होती हुई नेपाल, उत्तरी-पश्चिमी सीमा तक और पूरब में नेपाल के उत्तर पूर्व से भूटान तक तथा पुन: भूटान के उत्तरी-पूर्वी भाग में पूर्वोत्तर असम में म्यांमार की सीमा तक फैली है । हिमालय प्रारम्भ से ही दोनों के बीच प्राकृतिक सीमा रहा है । हिमालय के आर-पार के देश इसे आर्थिक दृष्टि से अनुपयोगी मानकर सीमांत के रूप में छोड़े हुए थे । इसलिए इस पर्वतीय क्षेत्र में कई स्वतन्त्र राज्य विकसित थे जैसे तिब्बत, नेपाल तथा भूटान । तिब्वत, चीन और भारत के बीच एक अन्तस्थ (Buffer State) के रूप में रहा । 1912 ई० तक यहाँ सीमा संबंधी कोई विवाद नहीं हुआ । लेकिन 1912 ई० में जब सनयात सेन के शासन में चीन एक गणतन्त्र के रूप में बना तभी से सीमा संबंधी समस्या उत्पन्न हुई । 1914 ई० में ब्रिटिश प्रशासन ने चीन और तिब्बत के साथ शिमला में सीमा संबंधी समझौता किया । इस सीमा के सूत्रधार हेनरी मैक मोहन थे । उन्हीं के नाम पर भारत-चीन सीमा मैक-मोहन सीमा रेखा से जानी जाती थी । यह स्थिति 1949 ई० तक रही । 1950 ई० में तिब्बत पर अधिकार के बाद भारत और चीन में सीमा को लेकर छोटी-छोटी झड़पें प्रारम्भ हुई । 1954 ई० में चीन ने उत्तर प्रदेश के साथ सीमा को लेकर तीब्र विरोध किया । 1956-57 में लद्दाख में अक्साई चीन सड़क का निर्माण कर चीन ने सीमा का उल्लंघन किया । अक्टूबर 1959 में और फिर अक्टूबर 1962 में चीन ने उत्तरी सीमा पर व्यापक, आक्रमण करके कुछ सीमान्त क्षेत्र पर अधिकार कर लिया । वर्त्तमान समय में लद्दाख की अक्साई चीन, मध्यवर्ती सीमा के कुछ दर्रे तथा नेफा सेक्टर के कुछ भाग आज भी चीन के कब्जे में हैं । उपर्युक्त कारणों तथा पाक अधिकृत कश्मीर का एक भाग चीन को दिये जाने के कारण सीमा विवाद और भी उलझ गए हैं ।

2. **भारत-पाक सीमा विवाद :** भारत को स्वतन्त्रता मिलते ही उसका दो भाग भारत और पाकिस्तान में विभाजन हो गया । यह विभाजन धार्मिक भावना के क्षेत्रीय आधार पर हुआ था । इससे भारत और पाकिस्तान के बीच की सीमा एक सांस्कृतिक सीमा या अध्यारोपित सीमा कही जा सकती है । केवल उत्तरी भाग को छोड़कर शेष भाग तक यह सीमा बिना किसी विवाद की है । भारत-पाक सदियों से एक भौगोलिक एवं सांस्कृतिक इकाई के रूप में रहे । अत: इसका विभाजन होने पर विशाल पैमाने पर जनसंख्या के स्थानान्तरण की समस्या भी उठ खड़ी हुई है । चूँकि भारत-पाक सीमा सिक्ख धर्म और उसकी क्षेत्रीय इकाई पंजाब तथा इस्लाम धर्म एवं उसकी क्षेत्रीय इकाई कश्मीर को अलग-अलग भागों में बाँटती थी, अत: उसी समय से सीमा संबंधी विवाद प्रारम्भ हो गया । परिणामस्वरूप पाकिस्तान का कश्मीर के एक बड़े भाग का अधिग्रहण और युद्ध विराम रेखा की स्थापना हुई । तब से यह विवाद आज तक चला आ रहा है । इस समस्या के कारण 1965 तथा 1971 में भारत और पाकिस्तान के बीच व्यापक पैमाने पर युद्ध हो चुका है । लेकिन यह समस्या ज्यों की त्यों बनी हुई है ।

3. भारत और हिन्द महासागर : सम्पूर्ण विश्व के सन्दर्भ में हिन्द महासागर की भौगोलिक स्थिति भू-राजनीतिक दृष्टिकोण से महत्त्वपूर्ण है । प्राचीन काल से ही पुरानी दुनिया के केन्द्र में रहकर हिन्द महासागर ने तटवर्ती देशों की राजनीति को प्रभावित किया है । इस महासागर की सुविधा के कारण ही प्राचीन काल में द० पू० एशिया के देशों में भारतीय उपनिवेश स्थापित हुए और भारतीय प्रभुत्व का विस्तार सम्पूर्ण दक्षिण एशिया के पूर्व एशियाई देशों तक हो गया था । भू-राजनीतिक उपयोगिता को ध्यान में रखकर ब्रिटेन ने इसके पूर्वी प्रवेश द्वारा पर सिंगापुर, मलेशिया और पश्चिमी प्रवेश द्वारा पर सेचेलिज तथा फारस की खाड़ी की सीमावर्ती द्वीपों पर एवं लाल-सागरीय द्वीपों पर अपना अधिकार स्थापित किया था । इसके परिणामस्वरूप पूर्वी अफ्रीका, दक्षिणी एवं द० पू० एशिया में ब्रिटेन के उपनिवेश लम्बे समय तक सुरक्षित रहे ।

औपनिवेशिक साम्राज्य समाप्त होने के बाद भी ब्रिटेन का आधिपत्य हिन्द महासागर के द्वीपों पर था । यह वस्तुतः उस के व्यापारिक हित को सुरक्षित रखने की योजना थी । कालान्तर में द्वितीय महायुद्ध के बाद साम्यवाद को घेरने की योजना के अन्तर्गत हिन्द महासागर, संयुक्त राज्य अमरीका और उसके मित्र देशों के लिए सहायक सिद्ध हुआ । अब विश्व का दृष्टिकोण बदल चुका है, साम्यवाद का प्रभाव क्षीण हो गया तथा रूस और संयुक्त राज्य एक-दूसरे के निकट आ रहे हैं तथा विश्व में वायु-शक्ति से प्रभावित भू-राजनीति का वर्चस्व बढ़ा है, इस स्थिति में भी भारत का हिन्द महासागर में भू-राजनीतिक महत्त्व अधिक है । इसका कारण यह है कि हिन्द का उत्तरी-पश्चिमी भाग पेट्रोलियम संसाधन का क्षेत्र है जिसमें विश्व की सारी महाशक्तियाँ रुचि ले रही हैं । पिछले वर्ष इराक के साथ युद्ध के समय संयुक्त राज्य अमरीका का साथ विश्व के अधिकांश विकसित देशों ने दिया है । इस युद्ध में महत्त्वपूर्ण भूमिका हिन्द महासागर के द्वीप डिगो गार्सिया ने निभायी है । इसके अतिरिक्त दक्षिणी एवं अफ्रीकी देश विभिन्न उद्योगों के लिए कच्चे माल के लिए उल्लेखनीय हैं । इसलिए विभिन्न पश्चिमी देशों की दृष्टि इस पर लगी रहती है । स्वयं भारत की सुरक्षा और उसके अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का सुरक्षित रूप से संचालित होना हिन्द महासागर पर उसके प्रभुत्त्व से ही सम्भव है । विशेष रूप से अण्डमान निकोबार द्वीप समूह और लक्षद्वीप भारत के लिए भू-राजनीतिक भूमिका का निर्वाह कर सकते हैं ।

□□□

पाठ—4

कृषि एवं वन संसाधन

भारत एक कृषि प्रधान देश है । अतः कृषि का यहाँ भारी महत्त्व है । भारत का कुछ क्षेत्रफल 304.32 मिलियन हेक्टेयर है । परन्तु यहाँ कृषि योग्य भूमि 140.72 मिलियन हेक्टेयर है, जो कुछ क्षेत्रफल का 4.6 प्रतिशत है । मात्र 35.24 मिलियन हेक्टेयर भूमि ऐसी है, जिसमें एक से अधिक फसलें उगाई जाती हैं । इस प्रकारा यहाँ कृषि की गहनता 125 प्रतिशत है । शुद्ध बोयी गई भूमि के अतिक्ति यहाँ 24.91 मिलियन हेक्टेयर या 8.3 प्रतिशत भूमि परती भूमि है, जिसे सही प्रबन्ध के द्वारा कृषि योग्य बनाया जा सकता है । यहाँ कुल कृषित भूमि के मात्र 35 प्रतिशत भाग पर सिंचाई होती है । शेष भूमि पर खेती वर्षा पर निर्भर करती है।

फसलों का मौसम : भारत में कृषि के दो प्रधान मौसम हैं, खरीफ एवं रब्बी । खरीफ की खेती मानसून से सम्बन्धित हैं । इसकी बोआई जून और जुलाई महीने में होती है तथा कटाई अक्टूबर, नवम्बर तक । जहाँ मानसून लम्बे समय तक कार्यरत रहता है, वहाँ खरीफ की दो फसलें प्राप्त की जाती हैं जो मौनसून के पूर्वार्द्ध में उपजती है, उसे भदई और जो उत्तरार्द्ध में उपजती है, उसे अगहनी कहते हैं । प्रमुख खरीफ फसलें धान, ज्वार, राई, मकई, कपास और जूट हैं ।

रब्बी फसलें शीत ऋतु की फसलें हैं । इनकी बोआई अक्टूबर से दिसम्बर तक होती है तथा कटाई मार्च से मई के बीच होती है । प्रधान रब्बी फसलों में गेहूँ, जौ, मटर, दलहन एवं तेलहन प्रधान हैं । रब्बी की खेती पूर्णतः सिंचाई पर निर्भर है ।

देश के अनेक भागों में सिंचाई की सुविधा उपलब्ध है, वहाँ रब्बी और खरीफ फसलों के बीच गरमा या जायद फसलें उगाई जाती हैं । गरमा फसलों में धान, सब्जियाँ और विभिन्न प्रकार की फसलें प्रधान हैं ।

खाद्य एवं अखाद्य फसलें—भारत में फसलों को दो वर्गों में रखते हैं—खाद्य फसलें और अखाद्य फसलें । खाद्य फसलों में अनाज और दलहन आते हैं । अनाजों में धान, गेहूँ ज्वार, बाजरा, मकई तथा मोटे अनाज शामिल किए जाते हैं । दलहन में तूर, चना,

मूँग, मसूर, खेसारी प्रधान हैं । अखाद्य फसलों में गन्ना, कपास, जूट, तम्बाकू आदि माली फसलें हैं । चाय, कॉफी, रबर, मसाले, इत्यादि रोपण कृषि के अन्तर्गत रखे जाते हैं । इनके अतिरिक्त फल, नारियल, काजू, सब्जियाँ आदि हौटी कल्चर के अन्तर्गत आते हैं । इन सभी फसलों की भारत में व्यापक खेती की जाती है ।

मुख्य फसलों का उत्पादन और क्षेत्रफल–भारत में खाद्य फसलें कुल बोयी गई भूमि के 73 प्रतिशत क्षेत्र में उगाई जाती है । खाद्यान्नों का उत्पादन जहाँ 1950-51 ई० में 51 मिलियन टन था, 1983-84 में 152 मिलियन टन और 1990-91 में 171 मिलियन टन हो गया है । खाद्यान्नों के अन्तर्गत स्वतन्त्रता के समय 97.3 मिलियन हेक्टेयर भूमि थी, जो अब बढ़कर 130 मिलियन हेक्टेयर हो गई है । भारत में यद्यपि कृषि का उत्पादन बढ़ा है, परन्तु इसमें काफी उतार-चढ़ाव पाया जाता है । जिस वर्ष बाढ़ या सूखे का प्रकोप रहता है, उस वर्ष उत्पादन में कमी हो जाती है । उदाहरण के लिए 1987-88 में मात्र 143.4 मिलियन टन खाद्यानों का उत्पादन हुआ, जबकि 1983-84 में कुल उत्पादन 152 मिलियन टन था ।

खाद्य फसलें–भारत में निम्नलिखित खाद्य फसलें प्रधान हैं ।

1. **धान**–यह देश की प्रमुख खाद्य फसल है । भारत की अधिकतर जनसंख्या का यह मुख्य भोजन है । धान के अन्तर्गत अन्य फसलों की अपेक्षा सबसे ज्यादा भूमि है । यह खरीफ फसल है तथा भदई और अगहनी दोनों मौसमों में उपजायी जाती है । धान के अन्तर्गत 62.2 मिलियन हेक्टेयर भूमि है तथा प्रतिवर्ष 74.1 मिलियन टन उत्पादन होता है । धन उत्पादन में आन्ध्रप्रदेश अग्रणी है । प० बंगाल दूसरे नम्बर पर, उत्तर प्रदेश तीसरे स्थान पर, पंजाब चौथे नम्बर पर, बिहार पाँचवें नम्बर पर, उड़ीसा छठे नम्बर पर तथा तमिलनाडु सातवें नम्बर पर है ।

2. **गेहूँ**–खाद्यान्नों में गेहूँ का दूसरा स्थान है । गेहूँ, रब्बी फसलों में प्रधान है । गेहूँ के अन्तर्गत 23.5 मिलियन हेक्टेयर भूमि है तथा प्रतिवर्ष 54.1 मिलियन टन उत्पादन होता है । गेहूँ उत्पादन में उत्तर प्रदेश का प्रथम स्थान है तथा पंजाब दूसरे स्थान पर आता है । गेहूँ के अन्य उत्पादक हरियाणा, मध्य-प्रदेश, राजस्थान, बिहार क्रमशः तीसरे, चौथे, पाँचवें और छठे स्थान पर आते हैं । हरित क्रान्ति के बाद यदि किसी फसल के उत्पादन में अप्रत्याशित वृद्धि हुई है तो वह गेहू की फसल है ।

3. **ज्वार और मकई**–ज्वार भारत की तीसरी प्रमुख फसल है । ज्वार की खेती खरीफ और रब्बी दोनों मौसमों में होती है । ज्वार के अन्तर्गत लगभग 16 मिलियन हेक्टेयर भूमि है तथा 13 मिलियन टन ज्वार का उत्पादन होता है । ज्वार का सबसे अधिक उत्पादन महाराष्ट्र, गुजरात, तमिलनाडू, मध्यप्रदेश और उत्तर प्रदेश में होता है । मकई मोटे अनाजों मे गिनी जाती है । इसकी खेती खरीफ और रब्बी दोनों मौसमों में होती है । परन्तु खरीफ मौसम प्रधान है । मकई के अन्तर्गत 6 मिलियन हेक्टेयर भूमि है तथा 9.4 मिलियन टन मकई का उत्पादन होता है ।

4. **अन्य**–भारत के अन्य खाद्यान्नों में बाजरा, मडुआ और मिलेट प्रधान है । इस प्रकार भारत में कुल अनाज का उत्पादन 158 मिलियन टन होता है तथा उसकी खेती 1033 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर होती है ।

5. **दलहन**–भारत में अनेक दलहनों की खेती होती है । प्रमुख दलहनों में चना, अरहर, मूँग और मसूर प्रधान है । चना की खेती पंजाब, उत्तरप्रदेश, मध्यप्रदेश और बिहार में होती है । अरहर की खेती राजस्थान, गुजरात, उत्तर प्रदेश और बिहार में होती है । मूँग और मसूर अन्य प्रमुख दलहन फसल है । पंजाब, हरियाणा, उत्तरप्रदेश और राजस्थान में उड़द की खेती होती है ।

अखाद्य फसलें–अखाद्य फसलों में निम्नलिखित प्रधान हैं ।

1. **गन्ना**–यह भारत की प्रमुख फसल है । गन्ने की खेती बड़े पैमाने पर होती है । विश्व का सबसे अधिक गन्ना यहीं उपजता हैं । गन्ने के अन्तर्गत 3.4 मिलियन हेक्टेयर भूमि है तथा 222.6 मिलियन टन गन्ने का उत्पादन होता है । उत्तरप्रदेश और बिहार, उत्तर के दो प्रमुख गन्ना उत्पादक प्रान्त हैं । दक्षिण भारत में महाराष्ट्र, आन्ध्रप्रदेश और तमिलनाडू अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं । इनके अतिरिक्त पंजाब, राजस्थान और मध्यप्रदेश में भी गन्ने की खेती होती है । विगत एक दशक में दक्षिणी भारत के राज्य प्रमुख गन्ना उत्पादक के रूप में उभरे हैं तथा उत्तर भारत की अपेक्षा अधिक चीनी का उत्पादन करते हैं । दक्षिणी भारत के प्रति हेक्टेयर गन्ने का उत्पादन उत्तर भारत की अपेक्षा अधिक है । दक्षिण भारत में ईख पेरने की अवधि भी उत्तर भारत से अधिक है ।

2. **कपास**–रेशेदार फसलों में कपास सबसे महत्त्वपूर्ण है । संयुक्त राज्य और रूस के बाद भारत कपास का सबसे अधिक उत्पादन करता है । भारत में कपास की खेती काली मिट्टी वाले क्षेत्र–महाराष्ट्र, गुजरात, पंजाब, मध्य प्रदेश, कर्नाटक और तमिलनाडु में होती है । भारत में इसके अंतर्गत 7.3 मिलियन हेक्टेयर भूमि है तथा प्रतिवर्ष 114 मिलियन गाँठ (1 गाँठ = 170कि०ग्रा०) कपास का उत्पादन होता है । भारत का कपास छोटे रेशेवाला कपास है जिससे मोटे कपड़े बनते हैं । अच्छे कपड़ों के लिए विदेशों से कपास का आयात किया जाता है ।

3. जूट और मेस्टा—यह भारत की तीसरी माली फसल है। इसकी खेती उन राज्यों में होती है, जहाँ अधिक वर्षा होती है। इसके प्रमुख उत्पादक राज्य प० बंगाल, बिहार, असम, त्रिपुरा और मेघालय हैं। उत्तर प्रदेश, उड़ीसा, आन्ध्रप्रदेश और कर्नाटक में भी इसकी खेती होती है। पाकिस्तान बनने के पूर्व भारत जूट का विश्व में प्रमुख उत्पादक था। परन्तु पाकिस्तान बनने के बाद जूट का बहुत बड़ा क्षेत्र पूर्वी पाकिस्तान (बंगलादेश) में चला गया है जबकि उसके औद्योगिक केन्द्र भारत में रह गए हैं। इससे दोनों में जूट की खेती प्रभावित हुई है। कृत्रिम अथवा रासायनिक रेशों का भी जूट उत्पादन पर व्यापक प्रभाव पड़ा है। यह उद्योग धीरे-धीरे नष्ट होता जा रहा है तथा जूट की खेती घटती जा रही है।

4. चाय—चाय भारत की प्रमुख रोपण कृषि है। चाय की खेती पूरबी हिमालय की दक्षिणी ढालों पर सर्वाधिक होती है। असम में ब्रह्मपुत्र की घाटी तथा पश्चिम बंगाल में दार्जिलिंग जिले में चाय का सबसे अधिक उत्पादन होता है। दार्जिलिंग की चाय अपने स्वाद और खुशबू के लिए विश्व विख्यात है। चाय की खेती काँगड़ा घाटी में भी की जाती है। दक्षिण भारत में नीलगिरि की पहाड़ी ढालों पर चाय की विस्तृत खेती होती है।। चाय उत्पादन एवं निर्यात में भारत का प्रथम स्थान है। चाय के अन्तर्गत 4 लाख हेक्टेयर भूमि है तथा प्रतिवर्ष 7 लाख टन का उत्पादन होता है।

5. कॉफी—कॉफी भारत की दूसरी रोपण कृषि है। कॉफी की खेती मुख्यत: दक्षिण भारत में होती है। कर्नाटक, केरल और तमिलनाडु कॉफी के मुख्य उत्पादक प्रान्त हैं। कॉफी की खेती मुख्यत: 2 लाख हेक्टेयर भूमि पर होती है और प्रतिवर्ष 1 लाख टन कॉफी का उत्पादन होता है।

6. रबर—भारत के रोपण कृषि में रबर का भी महत्त्वपूर्ण स्थान है। रबर की प्रधान खेती केरल राज्य में होती है। तमिलनाडु और कर्नाटक भी रबर के अन्य उत्पादक है।

7. तम्बाकू—भारत में तम्बाकू की खेती प्रधान है। संयुक्त राज्य अमेरिका और चीन के बाद भारत तम्बाकू का बड़ा उत्पादक है। यहाँ विश्व के कुल तम्बाकू का 10 प्रतिशत क्षेत्र है तथा 8 प्रतिशत उत्पादन होता है।

8. तिलहन—भारत में कई प्रकार के तेलहन उपजाए जाते हैं। तेल, तिल, तीसी, सुरबुजा, सरसों, नारियल, मूँगफली, अरण्डी, कपास के बीज आदि से प्राप्त होता है। मूँगफली और सरसों, तेलहन के खरीफ और रबी दोनों फसलें हैं। तेलहन के अन्तर्गत 23 मिलियन हेक्टेयर भूमि है तथा उत्पादन 16.8 मिलियन टन होता है। तेलहन के मुख्य उत्पादन तमिलनाडू, बिहार, उड़ीसा, उत्तर-प्रदेश, मध्य-प्रदेश, महाराष्ट्र और पंजाब है। भारत अपनी आवश्यकता की पूर्ति के लिए तेलहन का आयात भी करता है।

स्वतन्त्रता के बाद भारत में कृषि का पर्याप्त विकास हुआ है। न केवल कृषि क्षेत्र में वृद्धि हुई है, बल्कि प्रति हेक्टेयर उत्पादन काफी बढ़ा है। इसके पीछे, अधिक उत्पादन देनेवाले बीज, उर्वरक, कीटनाशक दवाइयाँ और सिंचाई के साधनों में विकास का हाथ है।

अधिक उत्पादन देनेवाले बीज—तृतीय पंचवर्षीय योजना के बाद अधिक उत्पादन देनेवाले बीज का उपयोग काफी बढ़ा है। इसके कारण उत्पादन में भारी वृद्धि हुई है तथा भारत खाद्यान्नों में आत्मनिर्भर हो गया है। गेहूँ और धान के उत्पादन में जहाँ पर्याप्त जल उपलब्ध हैं, ऐसे बीजों का उपयोग किया जाता है। इसका विस्तार वास्तव में प्रथम हरितक्रांति की देन है। आज उच्च उत्पादन देने वाले बीजों का प्रयोग काफी व्यापक है। जिन क्षेत्रों में इनका उपयोग होता है वे निम्नलिखित हैं—

धान—68.5 प्रतिशत

गेहूँ—90.5 प्रतिशत

ज्वार—51.7 प्रतिशत

बाजरा—52.4 प्रतिशत

मकई—47.5 प्रतिशत

उर्वरक—उच्च उत्पादन देनेवाले बीज के साथ ही रासायनिक उर्वरक का उपयोग काफी महत्त्वपूर्ण है। 1960-61 में प्रति हेक्टेयर रासायनिक खादों का उपयोग 1.9 कि० ग्रा० प्रति हेक्टेयर होता था, जो 1985-86 में बढ़कर 47.4 किग्रा और 90.91 में बढ़कर 67 कि०ग्रा० हो गया है। भारत में मुख्यत: नाइट्रोजेन और फॉस्फेट का उत्पादन होता है। इन दोनों से प्रतिवर्ष देश में 90.4 लाख टन खाद का उत्पादन होता है, जबकि 27.6 लाख टन खाद का आयात किया जाता है। भारत में पोटाश खाद का उत्पादन नहीं होता है, अत: इसकी सारी आवश्यकता आयात से पूरी की जाती है।

सिंचाई–भारत में 80.4 मिलियन हेक्टेयर भूमि पर सिंचाई की व्यवस्था है । भारत में स्वतन्त्रता के समय 22.6 मिलियन हेक्टेयर भूमि की सिंचाई क्षमता थी, जो सातवीं पंचवर्षीय योजना में बढ़कर 7.97 मिलियन हो गई । इन क्षमताओं से मात्र 71.4 मिलियन हेक्टेयर पर वास्तविक सिंचाई की जाती है ।

भारत में सिंचाई के कई साधन हैं–नहर, कुआँ और तालाब ।

1. **नहर** – सिंचाई के साधनों में नहर प्रधान है । आदिकाल से भारत में नहरों द्वारा सिंचाई हो रही है । वर्त्तमान समय में नहरों से लगभग 39 प्रतिशत सिंचाई प्राप्त की जाती है । उत्तर प्रदेश और पंजाब में नहरों से सर्वाधिक सिंचाई होती है । दक्षिण भारत में नदियों पर जलाशय बना कर सिंचाई की जाती है । देश के लगभग सभी राज्यों में कुछ-न-कुछ क्षेत्र नहरों से अवश्य सिंचित है । कुछ नहरें स्थायी हैं, जिनमें सालों भर जल उपलब्ध रहता है । परन्तु कुछ नहरें अस्थायी हैं तथा उनमें केवल वर्षा के दिनों में ही जल रहता है । उत्तरी भारत की नहरें स्थायी है, जबकि दक्षिण भारत की नहरें अस्थायी है ।

2. **कुआँ**–भारत में कुआँ द्वारा सिंचाई अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । लगभग 48 प्रतिशत भूमि की सिंचाई इनसे होती है । सामन्य कुआँ से 11 प्रतिशत तथा नलकुपों से 27 प्रतिशत भूमि सींची जाती है । कुओं से सर्वाधिक सिंचाई उत्तर-प्रदेश तथा तमिलनाडु और महाराष्ट्र में होती है । इन राज्यों में मिट्टी हल्की है तथा भूमिगत का स्तर काफी ऊँचा है । स्वतन्त्रता के बाद नलकूपों का विकास हुआ है । बिजली के उत्पादन में वृद्धि तथा डीजल की उपलब्धि के कारण ही इसका विस्तार संभव हुआ है । कुएँ और नलकूपों के कारण छोटे-छोटे और नहरों से दूर प्लॉट की भी सिंचाई संभव हुई ।

3. **तालाब**–लगभग 8 प्रतिशत भूमि की सिंचाई तालाब से की जाती है । मध्य और द० भारत में, विशेषकर तमिलनाडु और आन्ध्र प्रदेश में, नहरों से सबसे अधिक सिंचाई होती है । यहाँ की नदियाँ बरसाती है, जो गर्मी में सुख जाती है । धरातल के नीचे की चट्टानें कड़ी होने के कारण नल-कूप सम्भव नहीं है । उबड़-खाबड़ भूमि के कारण नहरों का निर्माण भी सम्भव नहीं है । अत: यहाँ तालाब के द्वारा सिंचाई ही एकमात्र साधन है । तालाब सिंचाई के लिए उत्तम नहीं होते, क्योंकि गर्मी में वे सुख जाते हैं । यदि वर्षा कम हुई तो तालाब भर नहीं पाते । तालाबों को हमेशा साफ रखना खर्चीला होता है ।

उपर्युक्त तीनों साधनों के अतिरिक्त लगभग 5 प्रतिशत भूमि अन्य साधनों से सींची जाती है । उपर्युक्त तीन साधनों में नहर द्वारा सिंचाई सबसे आसान और सस्ता है । लेकिन इसके कई कुप्रभाव भी हैं । नहरों के कारण पानी जमा हो जाता है और बहुत बड़ा भू-भाग दलदल और ऊसर भूमि में बदल जाता है । दलदली भू-भाग में मलेरिया जैसी बीमारी का प्रकोप होता है ।

सिचाई को तीन वर्गों में रखते हैं–वृहत्, मध्यम और लघु सिंचाई योजना । जिस योजना में 10 हजार हेक्टेयर से अधिक सिंचाई होती है उसे वृहत्, जहाँ 10 हजार से 2 हजार हेक्टेयर सिंचाई होती है उसे मध्यम, और जहाँ 2 हजार हेक्टेयर से कम सिंचाई होती है उसे लघु सिंचाई योजना कहते हैं । बाढ़-नियन्त्रण तथा सूखाग्रस्त क्षेत्रों को खुशहाल बनाने के लिए सिंचाई का विकास आवश्यक है । देश में बाढ़-नियन्त्रण, जल-संरक्षण और सिंचाई के विकास के लिए केन्द्रीय जल-आयोग की स्थापना की गई है। केन्द्रीय भूमिगत जल बोर्ड तथा सिंचाई और ऊर्जा केन्द्रीय बोर्ड बनाये गये हैं । इन्होंने सिचाई के विस्तार में सहायता प्रदान की है। देश में अनेक वृहत् सिचाई योजनाएँ तैयार की गई है, जिससे सिंचाई में प्रसार हुआ है । निम्नलिखित तालिका में प्रमुख सिंचाई योजनाएँ तथा उनकी स्थिति दिखलाई गयी है–

योजना का नाम	नदी का नाम जिसपर यह योजना है	राज्य जहाँ यह योजना स्थापित है ।
1. नागार्जुन सागर	कृष्णा	आन्ध्र प्रदेश
2. तुंगभद्रा	तुंगभद्रा	आन्ध्रप्रदेश, कर्नाटक
3. पोचमवाद	गोदावरी	आन्ध्र प्रदेश
4. कोसी	कोसी	बिहार व नेपाल
5. सोन नहर योजना	सोन	बिहार
6. ककरावारा	ताप्ती	गुजरात
7. उकाई	ताप्ती	गुजरात
8. साबरमती	साबरमती	गुजरात
9. भद्रा	भद्रा	कर्नाटक

10. मालप्रभा	मालप्रभा	कर्नाटक
11. चम्बल	चम्बल	मध्यप्रदेश, राजस्थान
12. महानदी	महानदी	मध्यप्रदेश व उड़ीसा
13. भीमा	पावना	महाराष्ट्र
14. कृष्णा	कृष्णा	महाराष्ट्र
15. ऊपरी पेनगंगा	पेनगंगा	महाराष्ट्र
16. हीराकुण्ड	महानदी	उड़ीसा
17. भाखरानंगल	सतलज	हरियाणा, पंजाब, राजस्थान
18. गण्डक	गण्डक	बिहार, उत्तर प्रदेश
19. राजस्थान नहर	सतलज	राजस्थान
20. शारदा	शारदा	उत्तर प्रदेश
21. टेहरी	भागिरथी	उत्तर प्रदेश
22. फरक्का	गंगा	प० बंगाल
23. मयूराक्षी (कनाडा डैम)	मयूराक्षी	प० बंगाल
24. दामोदर घटी (तिलैया, कोनार, मैथन, पंचेत आदि)	दामोदर	बिहार

वन संसाधन–यद्यपि पर्यावरण के संतुलन के लिए देश के एक-तिहाई भाग पर वनों का होना आवश्यक है, परन्तु भारत में मात्र 22.8% जंगल है । उसमें भी मात्र 14% भाग पर ही घने जंगल है। । इस तरह भारत में वनों का अभाव है । वनों के अन्तर्गत भूमि का कुल क्षेत्रफल 7.52 करोड़ हेक्टेयर है । इस तरह भारत में प्रति व्यक्ति 0.1 हेक्टेयर से भी कम वन हैं । जबकि संयुक्त राज्य अमरीका में 8.8 और सोवियत संघ में 35 हेक्टेयर वन हैं । भारत में वितरण असमान है । केवल अन्डमान निकोबार, उत्तर पूर्वी राज्य और पश्चिमी घाट की पश्चिमी ढाल पर घने वन हैं । वनस्पति तथा वन्य प्राणियों की सुरक्षा के लिए वनों को संरक्षण प्रदान किया गया है । इसके तरत वनों का संरक्षण और वन रोपन दोनों कार्यों को प्रधानता दी गई है । वनों से अनेक लाभ है । इससे इमारती लकड़ियाँ, कागज के लिए कच्चा माल दियासलाई की काठियाँ, लाह, रेशम, प्लाईबुड और खेल के सामान प्राप्त होते हैं । भारत में पाई जाने वाली मुख्य लकड़ियों में सागवान, साल, शीशम, महुआ, गंभार, चन्दन, बाँस आदि प्रधान हैं, ये उष्ण कटिबन्धीय वनों की लकड़ियाँ हैं । हिमालय के पर्वतीय भागों में ओक, लॉरेश, टेस्टनस, देवदार, फर, मैनपोलिया आदि प्रधान है । यहाँ बाँस के जंगल भी पाए जाते हैं । हिमालय में पायी जानेवाली लकड़ियाँ हल्की व मुलायम होती है, तथा उनका आर्थिक महत्त्व बहुत अधिक है । सामाजिक वानिकी में ऐसे लकड़ियाँ उत्पादित होती है, जिनका महत्त्व जलावन तथा दूसरे छोटे-छोटे कार्यों के लिए होता है । इनके कारण वनों पर भार कम हुआ है ।

वनों को कई वर्गों में रखा जाता है–उनमें सुरक्षित वन एवं संरक्षित वन–ये दो प्रधान है । वनों एवं वन्य पशुओं के संरक्षण के लिए राष्ट्रीय उद्यान और वन्य पशुओं का अभयारण्य बनाए गए हैं ।

जैवमण्डल–(बायोसफीयर) रिजर्व : पौधों, वन्य प्राणियों एवं सूक्ष्म जीवों के संरक्षण के लिए देश में 13 जैव मण्डल स्थापित करने की योजना है । इनमें चार स्थापित हो चुके हैं । उनके नाम हैं–नीलगिरि, नन्दादेवी, नोकरेक और ग्रेट निकोबार, सुन्दर वन, मनार की खाड़ी और मानस में जैव मण्डल रिजर्व स्थापित किए जा रहे हैं । अन्य निम्नलिखित है–

नाम	राज्य
1. नीलगिरि	तमिलनाडु-कर्नाटक व केरल
2. नामदाफा	अरुणाचल प्रदेश
3. नन्दादेवी	उत्तरप्रदेश
4. उत्तराखण्ड	उत्तरप्रदेश
5. अंडमान के उ० द्वीप	अंडमान और निकोबार
6. मनार की खाड़ी	तमिलनाडु

7. काजीरंगा	असम
8. सुन्दर वन	पश्चिम बंगाल
9. थार मरुस्थल	राजस्थान
10. मानस	असम
11. कन्हा	मध्यप्रदेश
12. नौकरेक	मेघालय
13. कच्छ का छोटा रन	गुजरात

राष्ट्रीय उद्यान एवं वन्य प्राणी अभयारण्य–

देश में वन्य प्राणियों के संरक्षण के लिए 67 राष्ट्रीय उद्यान और 394 अभयारण्य बनाए गए हैं। ऐसे वनों का विस्तार 1.33 लाख वर्ग कि०मी० पर है तथा उनके अन्तर्गत राष्ट्र की 4% भूमि है। इसका उद्देश्य वन्य प्राणियों को उनके प्राकृतिक वातावरण में रखना है तथा उसके लिए वनों को सुरक्षित बनाए रखना आवश्यक है। इसके बन जाने से सैलानियों को मनोरंजन भी प्राप्त होता है। इनमें 16 उद्यान और अभयारण्य टाइगर कहलाते हैं। वे निम्नलिखित हैं–

रिजर्व का नाम	राज्य	बाघ की संख्या
1. सिमलीपल	उड़ीसा	71
2. वेतला	पलामू, बिहार	62
3. बांदीपुर	कर्नाटक	53
4. कन्हा	मध्य प्रदेश	109
5. भेलघाट	महाराष्ट्र	80
6. रन्थम्भोर	राजस्थान	38
7. कॉरबेट	उत्तरप्रदेश	38
8. सुन्दवन	पश्चिमी बंगाल	264
9. मानस	असम	123
10. पेरियर	केरल	144
11. सरिस्का	राजस्थान	26
12. वम्सा	पश्चिम बंगाल	15
13. इन्द्रावती	मध्यप्रदेश	38?
14. नागार्जुन	मध्य प्रदेश	65
15. नामदाफा	अरुणाचल प्रदेश	45
16. दुधवा	उत्तर प्रदेश	35
17. कालाकाढ़	तमिलनाडु	अज्ञात
		कुल–1104

उपर्युक्त टाइगर रिजर्व के अतिरिक्त कुछ प्रमुख राष्ट्रीय उद्यान निम्नलिखित हैं–

अचनकुमार अभयारण्य	विलासपुर (मध्य प्रदेश)
माधव गढ़, राष्ट्रीय उद्यान	शाहडोल (मध्य प्रदेश)
बानराघट्टा राष्ट्रीय उद्यान	बंगलोर (कर्नाटक)
भीमबाँध अभयारण्य	मुंगेर (बिहार)
बोरीविली	मुम्बई (महाराष्ट्र)
चन्द्रप्रभा	बाराणसी (उत्तर प्रदेश)

दलमा	सिंहभूम (बिहार)
धान बर्ड सैंच्चुअरी	भरतपुर (राजस्थान)
गीर	जूनागढ़ (गुजरात)
गौतम बुद्ध	गया (बिहार)
हजारीबाग	हजारीबाग (बिहार)
काजीरंगा	जोरहट (असम)

विश्व में 16 केन्द्रों को विश्व संरक्षण सूची में रखा गया है । इनमें तीन काजीरंगा, मानस और केवलादेव (राजस्थान) भारत में हैं ।

□□□

पाठ—15

खनिज एवं औद्योगिक संसाधन

A. खनिज संसाधन—

भारत खनिज संसाधन में काफी धनी है । यहाँ लौह-अयस्क, कोयला, बॉक्साइट, मैंगनीज तथा अभ्रक का पर्याप्त भंडार है । पर जहाँ तक पेट्रोलियम, टिन, शीशा (रांगा), जस्ता, निकेल इत्यादि खनिजों का प्रश्न है, इनका भारी अभाव है । विगत दशकों में जो खनिजों की खोज हुई है उससे काफी आशा बन्धी है ।

भारत में खनिजों का वितरण काफी असमान है । भारत का विशाल मैदान खनिज-विहीन है । हिमालय-क्षेत्र में कोई महत्त्वपूर्ण खनिज नहीं है । परन्तु प्रायद्वीपीय भारत में लगभग सभी खनिज संचित है । उत्तरी-पूर्वी भाग में बिहार और उड़ीसा में खनिजों का एकीकरण पाया जाता है । यहाँ देश का तीन-चौथाई कोयला, बड़ी मात्रा में लोहा-अयस्क, मैंगनीज, अभ्रक, बॉक्साइट तथा रेडियो-धर्मी खनिज उपलब्ध हैं । शेष प्रायद्वीपीय भाग में खनिजों के भंडार फैले हुए हैं । असम और राजस्थान में भी कुछ खनिज मिलते हैं ।

1. **लौह-अयस्क**—भारत में लौह-अयस्क का कुल अनुमानित भंडार 17,570 मिलियन टन है जो विश्व के संचित भंडार का एक-चौथाई है । इसमें हेमाटाइट और मैग्नेटाइट का भंडार क्रमश: 11,470 मि० टन तथा 6100 मि० टन है । अयस्क का भंडार बिहार, उड़ीसा, मध्यप्रदेश, गोवा, कर्नाटक, आन्ध्रप्रदेश, तमिलनाडु और महाराष्ट्र में केन्द्रित है । बिहार और उड़ीसा में देश का 75 प्रतिशत लौह-अयस्क का उत्पादन होता है । भारत का लोहा धारवाड़ी कालीन है ।

2. **कोयला**—यह देश का प्रमुख ऊर्जा स्रोत है तथा उद्योगों का आधार है । भारत में कोयले का विस्तृत भंडार है जो अनुमानत: 116330 मिलियन टन है । लगभग शत-प्रतिशत कोयला गोंडबाना काल का है । इसका विस्तार दामोदर घाटी (बिहार एवं प० बंगाल), सोन-घाटी (बिहार एवं मध्यप्रदेश), महानदी घाटी (मध्यप्रदेश एवं उड़ीसा) गोदावरी घाटी (मध्यप्रदेश एवं आन्ध्र प्रदेश) आदि क्षेत्रों में मिलता है । इसके अतिरिक्त टर्सियारी ~~कालीन~~ कोयला अरुणाचल प्रदेश, असम, मेघालय, जम्मू-कश्मीर तथा नागालैण्ड में मिलता है । भारत के 4/5 भाग कोयले का संचित भंडार बिहार और पश्चिमी बंगाल के पेटी में मिलता है । यहाँ रानीगंज, गिरिडीह, बोकारो और कर्णपुरा, कोयले की मुख्य खानें हैं । इनके अतिरिक्त दामोदर घाटी के दक्षिण में कोयले की कुछ प्रमुख खानें हैं—सिंगरौली, कोरबा, रायगढ़ सोनहट, सोहागपुर तथा उमरिया मध्य प्रदेश में, देशगढ़ और तालचर उड़ीसा में, चन्दा महाराष्ट्र में और सिंगरेनी आंध्रप्रदेश में ।

3. **लिग्नाइट**—यह भूरे रंग का कोयला है तथा भारत के दक्षिण राज्यों में कहीं-कहीं मिलता है । इसका संचित भंडार लगभग 4.9 करोड़ टन तथा 383 करोड़ टन केवल तमिलनाडु के नेवेली खानों में पाया जाता है । लिग्नाइट की शेष मात्रा गुजरात, राजस्थान और पांडिचेरी में मिलती है ।

4. मैंगनीज—मैंगनीज अत्यन्त बहुमूल्य खनिज है तथा इसका मुख्य उपयोग इस्पात के निर्माण में किया जाता है देश में मैगनीज

का कुछ भंडार 1315 करोड़ टन है तथा विश्व में तीसरे स्थान पर आता है । उड़ीसा का स्थान मैंगनीज उत्पादन में प्रथम है । इसके बाद क्रमशः कर्नाटक, मध्यप्रदेश, महाराष्ट्र, गुजरात और गोवा का स्थान आता है । मैंगनीज का कुछ भंडार आन्ध्रप्रदेश, बिहार, तमिलनाडु और राजस्थान में भी मिलता है । उड़ीसा में मैंगनीज की मुख्य खानें क्योंझर, कालाहांडी, मयूरभंज और तालचर में हैं। बालाघाट, सिवनी, छिंदवारा, जबलपुर और झबुआ मध्यप्रदेश की मुख्य खाने हैं ।

5. **अभ्रक**—यह अत्यन्त प्रमुख खनिज है जिसका अधिकतर उपयोग बिजली उद्योग में किया जाता है । इसके अतिरिक्त बेतार के तार उपकरण, वायुयान बिजली के मोटर तथा रेडियो सेट के उत्पादन में भी इसका उपयोग होता है । भारत में अभ्रक का विश्व में सबसे बड़ा भंडार है । यहाँ से विश्व का दो-तिहाई उत्पादन प्राप्त होता है । अभ्रक मुख्यतः बिहार, राजस्थान और आंधा प्रदेश राज्यों में पाया जाता है । अभ्रक का सबसे अधिक उत्पादन बिहार के अभ्रक पेटी में होता है जिसका विस्तार गया, हजारीबाग, मुंगेर जिला में है । अभ्रक की दूसरी पेटी राजस्थान में है जिसका प्रसार अजमेर, शाहपुर, टोंक, भीलबाड़ा और जयपुर तक है । आंध प्रदेश के नेल्लुर जिले से भी अभ्रक का उत्पादन होता है ।

6. **बॉक्साइट**—यह अल्मुनियम का एक मात्र स्रोत है । इससे प्राप्त धातु के अनेक औद्योगिक उपयोग हैं । वायुयान उद्योग में भी हल्का होने और जंग नहीं लगने के कारण इसका उपयोग होता है । घरेलू, उपयोग के बर्त्तनों में भी इसे काम में लाया जाता है । बॉक्साइट का संचित भंडार अनुमानतः 26.37 करोड़ टन है । अधिकतर भंडार बिहार, मध्यप्रदेश और गुजरात में मिलता है । इसके अतिरिक्त तमिलनाडु, कर्नाटक, महाराष्ट्र और उड़ीसा में भी इसके भंडार हैं । कुछ भंडार उत्तरप्रदेश, आन्ध्र प्रदेश, केरल, जम्मू-कश्मीर और गोवा में भी हैं । बॉक्साइट उत्पादन बिहार के लोहरदग्गा और पलामू, गुजरात के कैरा, मध्यप्रदेश के कटनी एवं जबलपुर, तमिलनाडु के सलेम, कर्नाटक के चिंतलदुर्ग और शेलगाँव तथा महाराष्ट्र के कोल्हापुर जिलों में होता है । उपर्युक्त जिलों के अतिरिक्त मध्यप्रदेश के बालाघाट, बिलासपुर एवं बस्तर तथा जम्मू-कश्मीर के कोटली में बॉक्साइड का उत्खनन होता है ।

7. **ताम्बा अयस्क**—भारत में ताम्बा का भंडार अत्यन्त सीमित है । यहाँ ताम्बा का कुल संचित भंडार लगभग 63.75 लाख टन है । ताम्बा अयस्क का मुख्य भंडार बिहार के सिंहभूम तथा हजारीबाग, राजस्थान के भीलवाड़ा, झुनझुन और सिरोही, आन्ध्रप्रदेश के गुन्टुर तथा कर्नाटक के चित्रदुर्ग हतन और रायचूर जिलों में मिलता है । परन्तु ताम्बा का कुल उत्पादन बिहार के घाटशिला तथा मउभंडार और राजस्थान के खेताड़ी की खानों से प्राप्त होता है ।

8. **तेल एवं प्राकृतिक गैस**—भारत में तेल का सम्भावित क्षेत्र लगभग 10 लाख वर्ग कि० मी० में फैला हुआ है । यह सम्भावित क्षेत्र भारत के उत्तरी मैदान, तटीय पेटी, थार मरुस्थल, गुजरात के मैदानी भाग तथा अण्डमान निकोबार द्वीप हैं । महत्त्वपूर्ण क्षमता वाले क्षेत्र असम, त्रिपुरा, मणिपुर, पश्चिमी बंगाल, गंगा घाटी, हिमाचल प्रदेश, कच्छ, आन्ध्रप्रदेश और समुद्री उपतटीय क्षेत्र में हैं । भारत के कच्चे तेल का कुल भंडार लगभग 510.8 मिलियन टन है ।

असम में तेल का उत्पादन लखिमपुर जिले के दिगूबोई, वापापुंग और हंसापुंग तेल-कूपों से होता है । मोरान, नहरकटिया की खानें नयी हैं तथा वहाँ से भी उत्पादन होता है । स्वतन्त्रता की प्राप्ति तक केवल असम में ही तेल निकाला जाता था । परन्तु स्वतन्त्रता के बाद गुजरात में बड़ौदा तथा अहमदाबाद के निकट अंकलेश्वर, लूनेज, कलील तथा नवगाँव में भी तेल का उत्पादन होने लगा है । बम्बई के उपतटीय क्षेत्र में बम्बई-हाई के तेल क्षेत्र की खोज के परिणामस्वरूप देश की स्थिति काफी अच्छी है । यह क्षेत्र बम्बई तट से लगभग 120 कि०मी० उत्तर-पश्चिम है तथा देश का सबसे धनी तेल क्षेत्र है यहाँ तेल समुद्रतल से 5-6 कि० मी० गहराई पर मिलता है ।

9. **आणविक खनिज**—भारत में युरेनियम, थोरियम, ग्रेफाइट, जिरकॉन और वेरिलियम आदि खजिनत मिलते हैं । जिनसे अणु उर्जा का उत्पादन किया जा सकता है । ये खनिज आर्थिक एवं सामरिक दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण माने जाते हैं । युरेनियम बिहार में मिलता है । मोनाजाइट केरल तथा तामिलनाडुं के तटीय भाग के बालू से निकाला जाता है । यहाँ के तटीय बालू से बड़ी मात्रा में इल्मेनाइड, जिरकॉन तथा सिलिमेनाइड प्राप्त होता है । बेरिलियम मध्य राजस्थान में निकाला जाता है ।

10. **क्रोमाइट**—यह विशेष प्रकार के इस्पात तथा स्टेनलेस-स्टील के उत्पादन के लिए काम आता है । भारत मेक क्रोमाइट का संचित भंडार 135.3 मिलियन टन से कुछ अधिक है । उड़ीसा कर्नाटक, बिहार, तमिलनाडू, महाराष्ट्र आन्ध्रप्रदेश तथा मणिपुर में क्रोमाइट के निक्षेप मिलते हैं ।

11. **सोना**—भारत में कर्नाटक एकमात्र सोना उत्पादन करने वाला राज्य है । कोलार सोने की खानें कोलार जिले में, हुल्टी

की खानें रायचूर जिले में स्थित हैं । आन्ध्रप्रदेश के अनन्तपुर जिले में रामगिरि में भी सोने का पता चला है । बिहार के ताम्बा की खानों में कभी-कभी सोना मिल जाता है । भारत में सोना अयस्क का अनुमानित भण्डार 148.5 लाख टन है जिससे 81,060 किलोग्राम सोना प्राप्त हो सकता है ।

12. अन्य खनिज–उपर्युक्त खनिजों के अतिरिक्त देश में कई अन्य खनिज भी मिलते हैं जैसे मैगनेसाइट, केयानाइट, सिलिमेनाइट्, फायरक्ले, इल्मेनाइट, जिप्सम, हीरा, पायराइट, फॉसफेट, खनिज बेराइट, डोलोमाइट, चूना पत्थर इत्यादि । मैगनेसाइट, केयानाइट तथा सिलेमेनाइट तीनों ताप-रोधक खनिज हैं । इस्लेनाइट लोहा अयस्क का एक स्रोत है । जिप्सम का उपयोग सीमेंट तथा उर्वरक उद्योग में किया जाता है । पायराइट से गंधक निकाला जाता है जिसका उपयोग भारी रासायनिक उद्योग में होता है । पायराइट का प्रमुख भण्डार पलामू के आमझोर नामक स्थान पर है । फामफेट अपाटाइट नासक खनिज से प्राप्त होता है जिसकी खानें मध्यप्रदेश, राजस्थान और उत्तरप्रदेश में हैं । चूना-पत्थर का मुख्य उपयोग सीमेंट और इस्पात उत्पादन में होता है । यह देश के प्राय: सभी राज्यों में मिलता है । देश में चूना-पत्थर का कुल संचित भण्डार 3750 करोड़ मी० टन है । प्रमुख चूना-पत्थर उत्पादक राज्य मध्यप्रदेश, तमिलनाडु, बिहार और कर्नाटक हैं ।

B. औद्योगिक संसाधन–

भारतीय उद्योगों की पृष्ठभूमि–यद्यपि भारत के उद्योग का इतिहास काफी लम्बा है परन्तु यहाँ आधुनिक उद्योगों का प्रारम्भ ब्रिटिश उद्योगपतियों द्वारा किया गया । 19वीं शताब्दी के मध्य में कोयला, सूती-वस्त्र तथा जूट-उद्योग स्थापित किये गए । बाद में भारतीय उद्योगपतियों ने भी इस क्षेत्र में पदार्पण किया तथा सीमेंट, लोहा-इस्पात तथा अन्य कई उद्योगों की स्थापना की । जिस समय प्रथम विश्व-युद्ध प्रारम्भ हुआ, भारत में कई प्रमुख उद्योग स्थापित हो चुके थे । जिनमें कोयला, सूती-वस्त्र, जूट, सीमेंट, कागज, लोहा-इस्पात आदि प्रधान थे । इन उद्योगों में उत्पादन का स्तर काफी नीचा था युद्ध समाप्त होने के उपरान्त सरकार ने कुछ ध्यान दिया तथा एक औद्योगिक नीति की घोषणा की । इसके तहत कुछ उद्योगों को विदेशी स्पर्धा से सुरक्षा प्रदान की गई परन्तु अनेक उद्योगों को छोड़ दिया गया । दूसरे विश्वयुद्ध तक भारतीय उद्योग उपभोक्ता वस्तुओं का ही उत्पादन करते थे । इस अवधि में कुछ उद्योगों की प्रगति देखी गई, जैसे–सूती वस्त्र, जूट, चीनी, चाय, वनस्पति, कागज, सीमेंट, लोहा-इस्पात आदि, परन्तु पूँजीगत वस्तुओं के उद्योग, कुछ को छोड़, उपेक्षित रहे । स्वतन्त्रता प्राप्ति के उपरान्त भारत ने इस दिशा में काफी प्रगति की तथा विभिन्न पंचवर्षीय योजना के तहत अनेक उद्योग लगाये गये । भारत के प्रमुख उद्योग निम्नलिखित हैं–

1. सूती वस्त्र उद्योग-भारत के सूती-वस्त्र उद्योग का अतीत काफी उज्जवल रहा है । घरेलू उद्योग के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय प्रख्याति के कपड़ों का यहाँ उत्पादन होता था । ढाका का मलमल लोगों को आज भी इसकी याद दिलाता है । आधुनिक सूती-वस्त्र उद्योग का श्रीगणेश यहाँ 1818 ई० में हुआ जब सूती वस्त्र का प्रथम आधुनिक कारखाना कलकत्ता के निकट ग्लॉस्टर में स्थापित किया गया । लेकिन इसकी वास्तविक आधारशिला 1853 ई० में बम्बई में रखी गई, जब वहाँ एक कारखाना लगाया गया । इसके बाद के आरम्भिक वर्षों में मिलों की संख्या तेजी से बढ़ने लगी । अहमदाबाद, सूरत, शोलापुर, नागपुर आदि जगहों में मिलें स्थापित की गयीं ।

वर्तमान समय में सूती-वस्त्र उद्योग भारत के सबसे बड़े उद्योगों में हैं । 1951 ई० तक भारत में मिलों की संख्या 378 थी । परन्तु जब उनकी संख्या बढ़कर 1035 हो गई है । इनमें 752 सूत कातने वाले मिल हैं तथा 283 सूत कातने के अतिरिक्त बुनाई भी करते हैं । 98 मिलें सहकारिता क्षेत्र में हैं तथा 173 राष्ट्रीय अथवा राज्य कपड़ा निगम के अधीन हैं । यह उद्योग 15 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करता है । इन मिलों से प्रतिवर्ष 940 करोड़ मीटर वस्त्र का उत्पादन होता है । मिलों का विकास बम्बई, अहमदाबाद, मद्रास, बंगलोर, कानपुर और कलकत्ता केन्द्रों के चारों ओर हुआ है । देश के प्राय: सभी राज्यों में स्थानीय माँग के कारण मिलों की स्थापना हुई है । बम्बई, अहमदाबाद और कानपुर इनके मुख्य केन्द्र हैं । ऐसी मिलें जो बीमार हैं, राष्ट्रीय कपड़ा निगम द्वारा नियंत्रित हैं जो 1968 ई० में स्थापित किया गया ।

सूती-वस्त्र उद्योग की अनेक समस्याएँ हैं–(i) मिलों की मशीनें एवं संयन्त्र पुराने हो चुके हैं । (ii) विश्व के बाजार में सूती-वस्त्र की माँग धीरे-धीरे कम होती जा रही है, यही स्थिति देश के अन्दर के बाजारों में भी है । (iii) इस उद्योग में श्रमिकों की समस्या भी गम्भीर है तथा (iv) कपड़ा उत्पादन लागत भी यहाँ अधिक है ।

2. जूट उद्योग–जूट-उद्योग भारत के व्यवस्थित उद्योगों में से एक है । यह कृषि पर आधारित प्राचीन उद्योग है जिसका अतीत गौरवमय रहा है । यह कभी देश के लिए सर्वाधिक विदेशी मुद्रा भी अर्जित करता रहा है । 1834 ई० में जार्जा ऑकलैंड ने प्रथम जूट मिल की स्थापना कराई । प्रारम्भिक वर्षों में इसके विकास की गति धीमी रही तथा वस्तुओं का निर्यात भी बहुत कम हुआ । परन्तु शीघ्र ही इसके विकास की गति तेज हो गयी, परन्तु यह विकास क्षणिक था ।

भारत का विभाजन इस उद्योग के लिए बाधक सिद्ध हुआ । जहाँ जूट की खेती होती थी वह पाकिस्तान (अब बंगला देश) में चला गया तथा मिलें भारत में रह गयीं । उसके उपरान्त जूट के उत्पादन को बढ़ाने के लिए अनेक प्रयास किए गए, जिसमें कुछ सफलता भी मिली, पर इस उद्योग का पतन होता रहा । 1990-91 वर्ष में जूट का उत्पादन 13.89 मिलियन टन हुआ ।

1987-88 ई० में भारत में जूट की 66 मिलें थीं जिनमें 6 राष्ट्रीय जूट उत्पादक निगम के नियंत्रण में हैं जो वस्त्र मंत्रालय के अन्तर्गत सरकारी क्षेत्र हैं । यह उद्योग आज 2.5 लाख लोगों को जीविका प्रदान करता है । अधिकतर जूट मिलें हुगली नदी के किनारे पश्चिम बंगाल में हैं । बिहार, कटिहार, पूर्णिया तथा सहरसा जिलों में भी जूट की मिलें हैं । पश्चिम बंगाल में कृष्णानगर, कचरापाड़ा, नैहाटी, श्यामनगर, वैरकपुर, टीटागढ़, वेलवरिया, वलियाघाट, बजबज, बंसबेरिया, चंदननगर, चम्पादनी, सेदामपुर, रिसरा, हावड़ा, शिवपुर इसके मुख्य केन्द्र हैं । आन्ध्रप्रदेश में भी जूट की चार मिलें हैं । उत्तरप्रदेश में कानपुर तथा गोरखपुर में दो मिलें हैं । मध्यप्रदेश और असम में एक-एक हैं जूट मिलों के समक्ष भी कई समस्याएँ हैं–

(i) जूट की माँग अन्तर्राष्ट्रीय बाजार में गिरती जा रही है ।

(ii) मिलों की मशीनें पुरानी तथा बेकार होती जा रही हैं,

(iii) यहाँ कच्चे माल का अभाव है तथा

(iv) श्रमिकों का आंदोलन इसे दुष्प्रभावित करता है ।

3. **लोहा-इस्पात उद्योग**–यद्यपि भारत में लोहा-इस्पात उद्योग का शुभारम्भ पश्चिम बंगाल के कुल्टी नामक स्थान पर 1870 ई० में बंगाल आयरन वर्क्स की स्थापना के साथ हो चुका था परन्तु इसकी सही स्थापना 1907 ई० में जमशेदपुर में टाटा आयरन एण्ड स्टील कम्पनी के लगाए जाने के बाद हुई । इसके बाद 1919 ई० में बर्नपुर नामक स्थान पर इण्डियन आयरन एण्ड स्टील कम्पनी की स्थापना की गई । 1923 ई० में कर्नाटक के भद्रावती नामक स्थान पर मैसूर आयरन एण्ड स्टील कम्पनी की स्थापना की गई जिसका वर्तमान नाम विश्वेशवरैया आयरन एण्ड स्टील वर्क्स है । स्वतन्त्रता के पूर्व उपर्युक्त इकाइयों की उत्पादन क्षमता 13 लाख टन थी । परन्तु स्वतन्त्रता के उपरान्त इस उद्योग का तेजी से विकास हुआ तथा भिलाई, दुर्गापुर, राउरकेला, बोकारो, सालेम और विशाखापट्टनम में नए उद्योग लगाए गए ।

भिलाई इस्पात प्लांट–यह सरकारी क्षेत्र में लगाई जाने वाली प्रथम इकाई थी । इसकी स्थापना में सोवियत संघ की सहायता ली गई । इसकी प्रारम्भिक क्षमता 10 लाख टन थी जिसे बढ़ाकर 25 लाख टन कर दिया गया तथा 40 लाख टन के लिए इसका विस्तार किया जा रहा है ।

दुर्गापुर इस्पात प्लांट–यह प्लांट पं० बंगाल के दुर्गापुर नामक स्थान पर ब्रिटेन के सहयोग से लगाया गया । इसकी प्रारम्भिक क्षमता 10 लाख टन थी जिसे बाद में बढ़ाकर 16 लाख टन कर दिया गया । इस प्लांट के आधुनिकीकरण का कार्य चल रहा है। यह प्लांट रेलवे की पटरियों का बड़े पैमाने पर उत्पादन करता है ।

राउरकेला स्टील प्लांट–इसकी स्थापना पश्चिम जर्मनी की सहायता से राउरकेला नामक स्थान पर उड़ीसा में द्वितीय पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत की गई । इसकी प्रारम्भिक क्षमता भी 10 लाख टन थी जिसे विस्तार कर 18 लाख टन कर दिया गया । इस प्लांट का भी आधुनिकीकरण किया जा रहा है ।

बोकारो स्टील प्लांट–इसकी स्थापना 1978 ई० में भारतीय इन्जीनियरों द्वारा की गई । इस संयंत्र का डिजायन भारतीय इन्जीनियरों ने ही तैयार किया तथा देश के उद्योगों ने इसके लिए मशीन आदि की आपूर्ति की । इस प्लांट की प्रारंभिक उत्पादन क्षमता 25 लाख टन थी जिसे विस्तृत कर 40 लाख टन कर दिया गया है ।

सालेम स्टील प्लांट–इसकी स्थापना 1942 ई० में सालेम नामक स्थान पर की गयी । इसकी उत्पादन क्षमता 32,000 टन

स्टेनलेस स्टील उत्पादन की है जिसमें उद्योगों में काम आने वाले क्वायल (Coil) तथा रसोई के बर्त्तन भी शामिल हैं । इस प्लांट की उत्पान क्षमता बढ़ा कर 65,000 टन किया जा रहा है ।

विशाखापट्टनम स्टील प्लांट–यह देश का नौवाँ लोहा-इस्पात कारखाना है । इसकी स्थापना आन्ध्र प्रदेश के विशाखापट्टनम नामक स्थान पर 1989 ई० में हुई है । इसकी उत्पादन क्षमता 23 लाख टन है । आठवीं पंचवर्षीय योजना में इसके विस्तार किए जाने की संभावना है ।

1990-91 में भारत में लोहा-इस्पात का उत्पादन निम्नलिखित रहा–

बिक्री-योग्य इस्पात–95.3 लाख टन

तैयार इस्पात–134.0 लाख टन

कच्चा लोहा–13.9 लाख टन

भारत के निजी क्षेत्र के इस्पात संयंत्र की व्यवस्था SAIL (स्टील ऑथरिटी ऑफ इण्डिया लिमिटेड) द्वारा होती है । भारत में टाटा स्टील लिमिटेड एकमात्र एकाई है जो निजी क्षेत्र (प्राइवेट सेक्टर) में है ।

4. चीनी उद्योग–यह लोहा-इस्पात तथा सूती-वस्त्र उद्योग के बाद देश का तीसरा वृहत उद्योग है । यह उद्योग लगभग 3 लाख लोगों को जीविका प्रदान करता है । इसके अतिरिक्त 2.5 करोड़ लोग गन्ने की खेती में लगे हुए हैं । भारत विश्व का चौथा बड़ा चीनी उत्पादक देश है । यहाँ के आधुनिक चीनी उद्योग का प्रारम्भ 1903 ई० में हुआ, जब कुछ चीनी मिलें बिहार में स्थापित की गई । इसकी प्रारम्भिक प्रगति धीमी गति से हुई, परन्तु 1932 के बाद इसका तेजी से विकास होने लगा, जब इस उद्योग को सुरक्षा प्रदान की गई । चीनी की मिलें 1932 ई० में 32 से बढ़कर 1937 में 117 पहुँच गयी । स्वतन्त्रता के बाद इसके विकास के गति और तेज हुई । 1987 में मिलों की संख्या बढ़कर 307 हो गई । स्वतन्त्रता के समय भारत में मिलों की संख्या 138 थी । वर्त्तमान समय में 204 मिलें सहकारिता क्षेत्र में हैं तथा शेष निजी क्षेत्र में । चीनी उत्पादन में भी महत्त्वपूर्ण प्रगति हुई है । 1950-51 में चीनी का कुल उत्पादन 11.3 लाख टन था । 1980-81 में यह बढ़कर 51.5 लाख टन हो गयी । 1990-91 में उत्पादन 119.05 लाख टन हो गयी है ।

भारत की तीन-चौथाई चीनी मिलें उत्तरप्रदेश और बिहार में हैं । गन्ने का प्रति हेक्टर उत्पादन कम होना तथा मिलों की त्रुटिपूर्ण स्थिति के कारण उत्पादन लागत अधिक होता है । उत्तर भारत में गन्ने के उत्पादन में पंजाब का स्थान उत्तर-प्रदेश के बाद है । महाराष्ट्र और दक्षिण राज्यों का अब चीनी उत्पादन में निर्णायक स्थान है । यहाँ गन्ने का प्रति हेक्टर उत्पादन अधिक है तथा उसमें चीनी की मात्रा भी अधिक है । वहाँ गन्ने के पेरने की अवधि भी लम्बी होती है । चीनी के उत्पादन में वृद्धि के बाद भी देश में माँग के अनुपात में उत्पादन कम है । इसका मुख्य कारण पुराने मशीन और पुरानी तकनीक है । गन्ने को पेरने की अवधि भी छोटी है तथा गन्ना का क्षेत्र भी हमेशा समान नहीं रहता ।

5. सिमेंट उद्योग–सिमेंट उत्पादक देशों में भारत का विश्व में सातवाँ स्थान है । अन्य छः देश रूस, जापान, संयुक्त राज्य अमेरिका, इटली, जर्मनी तथा फ्रांस हैं । देश में उद्योग की नींब 1914 ई० में पोरबन्दर (गुजरात) में इण्डियन सिमेंट कम्पनी की स्थापना के बाद रखी गयी । वर्तमान समय में देश में 144 सिमेंट के कारखाने हैं । यह उद्योग लगभग 1 लाख व्यक्तियों को रोजगार प्रदान करता है । यद्यपि यह उद्योग देश के सभी भागों में फैला हुआ है, इसका सर्वाधिक एकत्रीकरण पश्चिम भारत में हुआ है । छठी पंचवर्षीय योजना में इस उद्योग में अप्रत्याशित विकास हुआ जब इसकी स्थापना क्षमता 2.43 करोड़ टन से बढ़कर 1988 में 5.83 करोड़ टन हो गया । सिमेंट के उत्पादन में भी इसी प्रकार वृद्धि हुई । 1980-81 का 1.86 करोड़ टन उत्पादन 1987-88 में 2.73 करोड़ टन तथा 1990-91 में 4.89 करोड़ टन हो गया । भारत में इस उद्योग को विकसित करने की अनेक बड़ी योजनाएँ हैं जिससे देश की माँग की पूर्ति हो सके ।

6. कागज उद्योग–कागज का उत्पादन किसी भी देश की साक्षरता का सूचक है । उच्च साक्षरता में कागज उद्योग की भूमिका को नजर-अंदाज नहीं किया जा सकता । परन्तु भारत में कागज का उत्पादन संतोषजनक नहीं है । वर्त्तमान समय में देश में 303 इकाईयाँ हैं जो कागज तथा कागज बोर्ड तैयार करते हैं तथा नियोजित क्षेत्र में हैं । इनकी स्थापित क्षमता 29.84 लाख टन

है । देश में 1950-51 में मात्र 1 लाख टन कागज का उत्पादन होता था, परन्तु 1987-88 में यह बढ़कर 16.62 लाख टन तथा 1990-91 में 20.1 लाख टन हो गया है ।

भारत में अभी तक अखबारी कागज की आपूर्ति आयात के द्वारा होती थी । 1980-81, तक भारत में अखबारी कागज की मात्र एक इकाई थी । नेशनल न्यूजप्रीन्ट एवं पेपर मिल लिमिटेड की स्थापना मध्य प्रदेश के नेपानगर में की गयी थी । 1981 ई० में मैसूर मिल तथा 1982 ई० में न्यूजप्रीन्ट लिमिटेड केरल ने उत्पादन प्रारम्भ किया । इसी वर्ष तमिलनाडू न्यूजप्रीन्ट लि० ने भी काम प्रारम्भ किया । आज देश में इसकी पाँच इकाईयाँ हैं तथा उनकी उत्पादन क्षमता 6.75 लाख टन है । इस कागज का उत्पादन भी इस अवधि में 51.3 हजार टन से बढ़कर 61.87 लाख टन हो गया है ।

7. **उर्वरक उद्योग**–भारत में उर्वरक उद्योग नया है परन्तु इसका देश में आज विशिष्ट स्थान है । विश्व में नेत्रजन उर्वरक उत्पादन में भारत का चौथा स्थान है तथा फॉसफेट उर्वरक उत्पादन में छट्ठा ।

भारत में पहला उर्वरक कारखाना की स्थापना 1905 ई० में मद्रास के निकट रानीपेट में हुई । TISCO ने 1919 ई० में जमशेदपुर में अमोनियम सल्फेट का कारखाना स्थापित किया । प्रथम नेत्रजन उर्वरक कारखाना की स्थापना 1939 ई० में हुई । 1947 ई० में केरल के अल्वई नामक स्थान पर दूसरा कारखाना लगाया गया । परन्तु इसकी असली नींव 1950 में पड़ी, जब सिंदरी (बिहार) में उर्वरक कारखाना खोला गया । दूसरा कारखाना पंजाब के नांगल में तथा तीसरा महाराष्ट्र के ट्राम्बे में खोला गया । आज देश में 55 उर्वरक के कारखाने हैं । इनमें नेत्रजन, फास्फेट और मिश्रित खाद तैयार होते हैं । इसके अतिरिक्त 84 इकाईयाँ हैं जो सिंगल सुपर फॉस्फेट तैयार करता है । 10 इकाइयाँ देश के विभिन्न भागों में स्थापित की जा रही हैं । देश में 9 सरकारी क्षेत्र की इकाइयाँ हैं जो उर्वरक का उत्पादन करती हैं । इनके अतिरिक्त अनेक वृहत इकाइयाँ निजी क्षेत्र में हैं जो दिल्ली, कोटा, कानपुर, विशाखापट्टनम, बड़ौदा, वाराणसी, बंगलौर तथा गोवा में स्थापित की गई हैं ।

देश में उर्वरक के उत्पादन में पिछले 25 वर्षों में महत्त्वपूर्ण वृद्धि हुई है परन्तु देश की आवश्यकता के अनुपात में यह काफी कम है । वर्त्तमान समय में उर्वरक का उत्पादन निम्नलिखित है–नेत्रजन उर्वरक 69.94 लाख टन तथा फॉस्फेट उर्वरक 20. 45 लाख टन (कुल 90.39 लाख टन) ।

देश में उर्वरक की माँग की आपूर्ति के लिए प्रतिवर्ष 26.93 लाख टन उर्वरक का आयात किया जाता है । इसमें अन्य उर्वरक के अतिरिक्त पोटाश उर्वरक भी शामिल है जिसका भारत में उत्पादन नहीं होता । इसका एक मात्र कारण है कि पोटाश उर्वरक का कच्चा माल भारत में उपलब्ध नहीं है ।

8. मशीन-औजार का उत्पादन–भारत में इंजीनियरिंग उद्योगों में काम करने वाले मशीन और अन्य औजार के उत्पादन करने वाले उद्योगों का महत्त्वपूर्ण विकास हुआ है । मशीन औजार का 1950-51 ई० में वार्षिक उत्पादन 1 करोड़ था जो अब बढ़कर 389.9 करोड़ हो गया है । अब यह उद्योग उच्च तकनीक वाले अत्युत्तम औजारों का निर्माण करता है । पिछले दो दशकों में न केवल देश में आयात किए गए तकनीक का इस्तेमाल हुआ है बल्कि देश में भी नए तकनीक एवं डिजाइन का विकास किया गया है । भारत अब इन मशीनों और औजारों का निर्यात भी करने लगा है । सरकारी क्षेत्र का हिन्दुस्तान मशीन टूल्स लिमिटेड भारत की सर्वोच्च इकाई है ।

9. हेवी इलेक्ट्रिकल्स उद्योग–इस उद्योग का विकास भी देश में अत्यन्त तीव्र गति से हुआ है । इसमें ऐसे संयंत्रों का निर्माण होता है जो बिजली उत्पादन, ट्रांसमिशन, वितरण तथा उपयोग के लिए आवश्यक हैं । आधारभूत वस्तुएँ जैसे स्टीम एवं हाइड्रोलिक टरबाइन, जेनरेटर, ट्रांसफारमर, व्यॉलर, स्वीच गियर, बिजली धमन भट्ठी तथा इन्डस्ट्रीयल लोकोमोटिव का यहाँ उत्पादन होता है । इस उद्योग का इतना विकास हुआ है कि अब यह देश की माँग की आपूर्ति में सक्षम है । सरकारी क्षेत्र में स्थापित भारत हेवी इलेक्ट्रिकल्स जिसकी इकाइयाँ भोपाल, हरिद्वार और हैदराबाद में भी हैं, देश में सबसे बड़ा उत्पादक है ।

10. इलेक्ट्रॉनिक उद्योग–यह उद्योग विश्व भर में तेजी से विकसित होने वाला उद्योग है । विश्व में उत्पादित होने वाली वस्तुओं में आज 1/6 भाग इसी उद्योग से प्राप्त होता है । पिछले दो दशकों में जितनी प्रगति इस उद्योग ने की है, अन्य कोई दूसरा उद्योग नहीं ।

भारत में 1985 ई० तक इलेक्ट्रोनिक उद्योग 20 प्रतिशत की दर से बढ़ रहा था । पिछले 5 वर्षों में वृद्धि दर काफी तेज

हो गयी है । इलेक्ट्रॉनिक उद्योग के मुख्य उत्पाद रंगीन-चित्र ट्यूब, एल० एस० आई० उपकरण, टी० वी० उपकरण, टेलीफोन उपकरण, PCB'S, EPABX, ध्वनि प्रसारण यंत्र, इलेक्ट्रॉनिक स्विच, सैटेलाइट संचार प्रणाली संयंत्र, टी० वी० और रेडियो प्रसारण संयंत्र, माइक्रो प्रेसेसर बोर्ड प्रणाली, सुपर-मिनी और मेन फ्रेम प्रणाली, कमप्यूटर एवं अन्य हैं ।

वह क्षेत्र जिसमें इस उद्योग ने अत्यधिक प्रगति की है, वह है–कमप्यूटर उद्योग, जिसमें कमप्यूटर तथा उसके पार्ट एवं संचार उपकरण का उत्पादन होता है । भारत ने अब इनका निर्यात भी प्रारम्भ कर दिया है । 1983 ई० में भारत ने 115 करोड़ रुपये के इलेक्ट्रोनिक उपकरणों का निर्यात किया जो 1983 ई० में 475 करोड़ रुपया हो गया । कमप्यूटर का उपकरण (Software) निर्यात वस्तुओं में सबसे प्रमुख स्थान पर चला आया है 1988 ई० में इसके निर्यात का कुल मूल्य 100 करोड़ रुपया था ।

11. ग्राम-उद्योग–ग्राम उद्योग एवं कुटीर उद्योग में वे सभी उद्योग शामिल हैं जिन्हें ग्रामीण क्षेत्र में छोटे पैमाने पर तथा परिवार के सदस्य मिलकर उत्पादन करते हैं । ऐसे उद्योगों का व्यापक पैमाने पर विकास हुआ है तथा वहीं ग्रामों तथा उप-नगरीय क्षेत्रों में स्थापित हैं । इसमें परिवार के सदस्य पूर्ण अवधि या अवकाश के समय काम करते हैं । हस्त करघा, हस्त-उद्योग, रेशम उद्योग, नारियल के रेशे से बनी वस्तुएँ, खादी आदि महत्त्वपूर्ण उद्योग इसमें आते हैं । इन उद्योगों का भारत की आर्थिक व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण योगदान है क्योंकि यह करोड़ों लोगों को कृषि क्षेत्र के बाहर जीविका प्रदान करता है ।

12. लघु उद्योग–लघु उद्योग ऐसे उद्योग हैं जिनमें पूँजी बहुत कम लगी होती है । इसमें अतिरिक्त भी इसकी पहचान के लिए कई अन्य सूचकांक भी हैं । सामान्यत: जिन उद्योगों में प्लांट तथा मशीनों पर आने वाला लागत 35 लाख से कम है, लघु-उद्योग कहलाते हैं । इससे अधिक तथा 45 लाख से कम लागत वाले उद्योग में एक वर्ग सहायक उद्योगों (Ancillary Industry) का है । पर इनके लिए आवश्यक है कि वह उद्योग लगभग 30 प्रतिशत माल दूसरे उद्योगों को दें । जिन उद्योगों में 2 लाख या कम लागत है, उन्हें अति लघु (Tiny) उद्योग कहा जाता है । देश की आर्थिक प्रगति में इसका भी भारी महत्त्व है ।

□□□

पाठ–6

मानव संसाधन

संसाधन से तात्पर्य उनसे है जिनसे आर्थिक लाभ की प्राप्ति होती है । परन्तु कोई भी वस्तु संसाधन नहीं हो सकती जब तक मनुष्य उसे उपयोग कर लाभकारी नहीं बना लेता । मनुष्य की इस भूमिका के कारण ही उसे भी संसाधन कहा जाता है ।

भारत में मानव संसाधन वन के बाद सर्वाधिक है । 1991 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या 8,43,930,861 है । जनसंख्या का विवरण निम्नलिखित है–

कुल जनसंख्या	–	8,43,930,861
पुरुष	–	3,37,297,929
स्त्री	–	4,06,332,933
लिंगानुपात	–	929
घनत्व	–	267 व्यक्ति प्रति वर्ग कि० मी०
जनसंख्या वृद्धि दर	–	23.5 प्रतिशत
साक्षरता	–	52.11 प्रतिशत

जनसंख्या की वृद्धि–भारत में वैज्ञानिक ढंग से जनगणना का प्रारम्भ 1871 ई० में हुआ । दूसरी जनगणना 1881 ई० में

हुई । इसके बाद से प्रत्येक दस वर्षों पर जनगणना होती रही है । पिछली जनगणना 1991 ई० में हुई । निम्नलिखित तालिका में जनसंख्या की वृद्धि दर्शायी गयी है ।

जनगणना वर्ष	जनसंख्या (करोड़ में)	वृद्धि दर (प्रतिशत में)
1901	23.84	5.75
1911	25.21	–0.31
1921	25.13	11.0
1931	27.9	14.22
1941	31.87	13.31
1951	36.11	13.31
1961	43.92	21.51
1971	43.82	24.80
1981	68.33	24.66
1991	84.39	23.50

तालिका से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं :

(i) 1901 से 1921 तक जनसंख्या की वृद्धि दर असमान रही है । इस अवधि में केवल 1.6 करोड़ लोगों की वृद्धि हुई, जो 0.2 प्रतिशत से भी कम थी । विभिन्न संक्रामक रोग के कारण 1911 से 1921 के बीच इतने लोगों की मृत्यु हुई कि जनसंख्या में नकारात्मक वृद्धि रेकार्ड की गयी । मौनसून के ठीक नहीं होने से दुर्भिक्ष भी पड़े । इससे भी लोगों की मृत्यु हुई ।

(ii) 1931-51 के बीच भारत की जनसंख्या मध्यम गति से बढ़ी । कृषि में विकास, उद्योगों की स्थापना, परिवहन साधनों का विकास, चिकित्सा सुविधा तथा अच्छा एवं पौष्टिक भोजन के कारण मृत्यु दर में गिरावट आई । 1951 में वृद्धि दर में कमी का कारण भारत का बँटवारा था । जिसके कारण काफी संख्या में लोग पाकिस्तान चले गए । इस अवधि में कुल 10.998 करोड़ लोगों की वृद्धि हुई ।

(iii) 1951-1981 इन तीन जनगणना वर्षों में भारत की जनसंख्या की वृद्धि तीव्रतर गति से हुई । मृत्यु-दर में भारी गिरावट, जीवनदायिनी औषधियों की खोज, पौष्टिक भोजन, सिंचाई के कारण कृषि का सफल होना, उच्च-उत्पादन देने वाले बीज का प्रयोग, कीटनाशक दवाइयों एवं उर्वरक का उपयोग, कृषि तकनीक में विकास, उद्योग एवं व्यवसाय में विकास के कारण जनसंख्या तेजी से बढ़ी । इस कारण इस काल को जनसंख्या का विस्फोटक काल कहते हैं । इस अवधि में जनसंख्या में 32.22 करोड़ की वृद्धि हुई ।

जनसंख्या की वृद्धि जन्म एवं मृत्यु दर से संबन्धित है : निम्नलिखित तालिका में जन्म और मृत्युदर दिखलायी गयी है ।

वर्ष	जन्म दर (प्रति हजार जनसंख्या)	मृत्यु दर (प्रति हजार जनसंख्या)
1901-11	48.1	42.6
1911-21	49.2	48.6
1921-31	46.4	36.3
1931-41	45.2	31.2
1941-51	39.9	37.4
1951-61	41.7	22.8
1961-71	41.2	19.2
1971-81	37.2	15.2
1981-91	32.5	11.2

विगत दशक में जन्म-दर 48.1 से घटकर 32.5 **प्रति हजार हो गयी है** जबकि इसी अवधि में मृत्युदर 15.0 से गिरकर 11.2 पर चली आयी है, जो न्यूनतम सीमा मानी जा सकती है । मृत्यु-दर के घटने से जीवन रेखा बढ़कर 54 वर्ष हो गई है ।

राज्यवार जनसंख्या का वितरण—निम्नलिखित तालिका में राज्यों एवं केन्द्र शासित प्रदेशों की जनसंख्या एवं घनत्व दिखलाया गया है—

राज्य	जनसंख्या (करोड़ में)	भारत में स्थान	घनत्व (प्रतिवर्ग कि० मी०)	भारत में स्थान
उत्तर प्रदेश	13.876	I	471	IV
बिहार	8.034	II	497	III
महाराष्ट्र	7.971	III	256	XI
पश्चिम बंगाल	6.798	IV	766	I
आन्ध्र प्रदेश	6.630	V	241	XII
मध्य प्रदेश	6.616	VI	149	XVI
तमिलनाडु	5.564	VII	428	V
कर्नाटक	4.482	VIII	234	XIII
राजस्थान	4.388	IX	128	XVII
गुजरात	4.117	X	210	XIV
उड़ीसा (ओडिसा)	3.151	XI	202	XV
केरल	2.901	XII	747	II
असम	2.229	XIII	284	IX
पंजाब	2.019	XIV	401	VI
हरियाणा	1.632	XV	369	VII
जम्मू-कश्मीर	0.772	XVI	76	XXI
हिमाचल प्रदेश	0.511	XVII	92	XVIII
त्रिपुरा	0.275	XVIII	262	X
मणिपुर	0.183	XIX	82	XIX
मेघालय	0.176	XX	78	XX
नागालैंड	0.122	XXI	73	XXII
गोआ	0.101	XXII	316	XXIII
अरुणाचल प्रदेश	0.086	XXIII	10	XV
मिजोरम	0.069	XXIV	33	XXIV
सिक्किम	0.041	XXV	57	XXIII

केन्द्र शासित प्रदेश

दिल्ली	93.70 लाख	6319
पांडिचेरी	7.89 ,,	1605
चण्डीगढ़	0.41 ,,	5620
अंडमान एवं निकोबार	2.78 लाख	34

दादरा एवं नगरहवेली	1.39 ,,	282
दमन एवं दीव	1.02 ,,	906
लक्ष द्वीप	0.52 ,,	1615

उपर्युक्त तालिका से स्पष्ट है कि जनसंख्या की दृष्टि से–

(i) उत्तर प्रदेश सबसे बड़ा है तथा सिक्किम सबसे छोटा।

(ii) बिहार में उत्तर प्रदेश के बाद सबसे ज्यादा जनसंख्या है।

(iii) पश्चिम बंगाल में सर्वाधिक जनसंख्या का घनत्व है।

(iv) सबसे कम घनत्व अरुणाचल प्रदेश में है।

(v) घनत्त्व की दृष्टि से बिहार, पश्चिम बंगाल और केरल के बाद सबसे घनी आबादी का राज्य है।

(vi) केन्द्र शासित प्रदेशों में दिल्ली की जनसंख्या और घनत्व दोनों दष्टि से प्रथम स्थान पर है।

(vii) लक्षद्वीप की केन्द्रीय शासित प्रदेश में जनसंख्या सबसे कम है पर अंडमान निकोबार द्वीप में घनत्व सबसे कम है।

लिंगानुपात–लिंगानुपात का अर्थ प्रति 1000 पुरुष पर स्त्रियों की संख्या है। 1991 की जनगणना में भारत में यह अनुपात 929 है। अर्थात् जहाँ पुरुषों की संख्या 1000 है, वहीं स्त्रियों की संख्या 929 है। इससे स्पष्ट है कि भारत की जनसंख्या में पुरुषों की प्रधानता है, तथा स्त्रियों के लिए प्रतिकूल है। इस शताब्दी के प्रारम्भ से ही स्त्रियों का अनुपात घटता जा रहा है।

यह निम्न तालिका से स्पष्ट है–

वर्ष	लिंगानुपात	वर्ष	लिंगानुपात
1901	972	1951	946
1911	964	1961	941
1921	955	1971	930
1931	950	1981	934
1941	945	1991	929

लिंगानुपात की निम्नलिखित विशेषताएँ–

(i) इस शताब्दी के प्रारम्भ में लिंगानुपात 972 से गिरकर 1991 में 929 पहुँच गया है।

(ii) केवल 1951 तथा 1981 में अपने पिछले दशक से यह अनुपात थोड़ा बढ़ा था, पर पुनः घटने लगा है।

(iii) केरल में लिंगानुपात 1040 है जो सर्वाधिक है। अर्थात् इस शताब्दी के प्रारंभ से ही केरल स्त्रियों की जनसंख्या के लिए अनुकूल रहा है।

(iv) 1911 और 1921 में बिहार में स्त्रियों की संख्या अधिक रही है। उसी प्रकार 1901 से 1961 तक गोआ, मणिपुर, मिजोरम तथा उड़ीसा स्त्रियों के लिए अनुकूल रहा है।

(v) 1901 से 1961 तक तमिलनाडू में भी स्त्रियों की संख्या अधिक रही है।

(vi) केन्द्र शासित प्रदेशों में 1911 से 1981 तक दमन और दीव में तथा 1901 से 1961 तक लक्षद्वीप में 882, अरुणाचल प्रदेश में 861, हरियाणा में 874 तथा पंजाब में 888 हैं।

(vii) विभिन्न राज्यों में सिक्किम में लिंगानुपात न्यूनतम अर्थात् 880/1000 है। अन्य राज्यों में उत्तर प्रदेश में 882, अरुणाचल प्रदेश में 861, हरियाणा में 874 तथा पंजाब में 888 हैं।

(viii) केन्द्र-शासित प्रदेशों में सबसे अधिक लिंगानुपात पांडिचेरी से 982 तथा सबसे कम चंडीगढ़ में 783 हैं।

(ix) बिहार में लिंगानुपात मात्र 912 है जो देश के औसत से कम है।

साक्षरता–भारत में 1991 की जनगणना के अनुसार साक्षरता मात्र 52.11 है। पुरुष यह अधिक, 63.86 प्रतिशत है, जबकि स्त्रियां में 39.42 प्रतिशत है। साक्षरता के आंकड़े निम्नलिखित हैं–

वर्ष	साक्षरता का %	पुरुष साक्षरता का %	महिला साक्षरता का %
1901	5.35	9.83	0.60
1911	5.92	10.56	1.05
1921	7.16	12.21	1.81
1931	9.50	15.59	2.93
1941	16.10	24.90	7.30
1951	16.67	24.95	7.93
1961	24.02	34.44	12.95
1971	29.45	39.45	18.69
1981	36.17	46.74	24.88
1991	52.11	63.86	39.42

उपर्युक्त आँकड़ों से निम्नलिखित बातें स्पष्ट होती हैं–

(i) इस शताब्दी के आरंभ से लेकर 1991 तक साक्षरता में 10 गुणा वृद्धि हुई है ।

(ii) पुरुष साक्षरता में जहाँ 7 गुणा वृद्धि हुई है, वहीं स्त्रियों की साक्षरता में 6 गुणा ।

(iii) स्वतन्त्रता के बाद साक्षरता में तीन गुणा वृद्धि हुई है । पुरुष साक्षरता में यह वृद्धि ढ़ाई गुणा तथा स्त्रियों की साक्षरता में पाँच गुणा वृद्धि हुई है । अर्थात स्वतन्त्रता के बाद स्त्री-शिक्षा को काफी महत्त्व दिया गया है ।

(iv) पुरुष और स्त्रियों की साक्षरता का अनुपात अभी भी 5:2 है ।

(v) 1991 की जनगणना में 7 वर्ष कम आयु के बच्चों को साक्षर नहीं माना गया है, जबकि 1981 में यह सीमा 4 वर्ष रह गयी थी ।

(vi) राज्यों में केरल प्रथम स्थान पर आया है । यहाँ साक्षरता 90.59% है । अन्य राज्यों की स्थिति इस प्रकार है--

मिजोरम 81.23%, गोआ 76.86%, तमिलनाडू 63.72%, हिमाचल प्रदेश 65.54%, महाराष्ट्र 65.05%, गुजरात 60.91% तथा पश्चिमी बंगाल 57.92 % है। बिहार में मात्र 38.54% लोग ही साक्षर हैं । यहाँ पुरुष साक्षरता 52.63% तथा महिला साक्षरता 23.10% है । यह आंकड़ा देश के सभी राज्यों से कम है ।

(vii) जिस दर से देश की जनसंख्या बढ़ रही है, उस दर से देश में साक्षरता नहीं बढ़ रही है । यह इस बात से स्पष्ट है कि 1981 में असाक्षर की संख्या 30.19 करोड़ थी जो 1991 में बढ़कर 32.40 करोड़ हो गई । बिहार में असाक्षरों की संख्या देश में उत्तर प्रदेश के बाद सबसे ज्यादा है ।

(viii) केरल देश में पहला राज्य है, यहाँ साक्षरता शत्-प्रतिशत है ।

जनसंख्या की रोजगार संरचना

1981 की जनगणना के अनुसार भारत की जनसंख्या निम्नलिखित रोजगारों में लगी हुई थी–

वर्ष	जनसंख्या	प्रतिशत
(i) कृषि कार्य	15.3 करोड़	70.7%
(ii) औद्योगिक और खनन	2.64 करोड़	21.6%
(iii) सेवा या अन्य कार्य	4.31 करोड़	16.7%
	कुल–22.25 करोड़	100%

(i) इससे स्पष्ट है कि देश में 2/3 से अधिक कार्यरत जनसंख्या कृषि में लगी हुई है । इनमें कृषकों की संख्या 9.25 करोड़, कृषि-श्रमिकों की संख्या 5.55 करोड़ तथा पशुपालन, वानिकी और मत्स्य-उत्पादन में लगी जनसंख्या 0.50 करोड़ है ।

(ii) विभिन्न सेक्टरों में लगी जनसंख्या के प्रतिशत में इस शताब्दी के प्रारम्भ से मामूली अन्तर पाया जाता है । वास्तव में कृषि कार्य में 1% जनसंख्या की कमी हुई है तथा सेवा कार्यों में 1% की वृद्धि हुई है । औद्योगिक और खनन में यह प्रतिशत 12. 6 पर स्थित है ।

ग्रामीण एवं नगरीय जनसंख्या–भारत में 1981 की जनसंख्या के अनुसार नगरीय जनसंख्या 16.22 करोड़ थी अर्थात् कुल जनसंख्या का 23.7 प्रतिशत नगरीय जनसंख्या थी । 1981 की जनगणना के अनुसार यह प्रतिशत लगभग 30 हो गई है । इसके आनेवाले वर्षों में तेजी से बढ़ने की सम्भावनाएँ हैं । निम्न तालिका में ग्रामीण और नगरीय जनसंख्या का विवरण दिया गया है ।

वर्ष	नगरीय जनसंख्या (दस लाख में)	ग्रामीण जनसंख्या का प्रतिशत	नगरीय जनसंख्या का प्रतिशत
1901	25.8	89.90	11.0
1911	25.9	89.6	10.4
1921	20.9	88.7	11.3
1931	35.5	87.8	12.2
1941	44.1	85.9	14.1
1951	62.4	82.4	17.6
1961	78.9	81.7	18.3
1971	108.9	79.8	20.2
1981	162.2	76.3	23.7
1991 (अनुमानित)	235.7	70.1	29.0

नगरीय जनसंख्या में सबसे बड़ा योगदान महानगरों का है । इसके अतिरिक्त 10 लाख से अधिक जनसंख्या वाले नगरों का भी इसमें बड़ा योगदान है । 1991 की जनगंणना के अनुसार 20 ऐसे नगर हैं, जिनकी जनसंख्या 10 लाख से अधिक है । वे नगर निम्नलिखित हैं–

नगर	जनसंख्या (दस लाख में)	नगर	जनसंख्या (दस लाख में)
1. मुम्बई	12.57	11. नागपुर	1.65
2. कलकत्ता	10.86	12. सूरत	1.52
3. दिल्ली	8.38	13. जयपुर	1.51
4. मद्रास	5.36	14. इन्दौर	1.17
5. हैदराबाद	4.27	15. कोयम्बटूर	1.14
6. बंगलोर	4.11	16. बड़ोदरा	1.12
7. अहमदाबाद	3.28	17. पटना	1.10
8. पूने	2.44	18. मदुराई	1.09
9. कानपुर	2.10	19. भोपाल	1.06
10. लखनऊ	1.67	20. वाराणसी	1.02

(i) 1981 में कलकत्ता देश का सबसे बड़ा महानगर था पर अब मुम्बई बड़ा महानगर हो गया है ।

(ii) क्रम संख्या 12 तथा 14 से 20 नए नगर हैं, जिनकी जनसंख्या 10 लाख से अधिक है । 1981 की जनगणना तक इसकी जनसंख्या 10 लाख से कम थी ।

(iii) सूरत 1991 में अपना स्थान 12 पर ले गया है तथा बारहवें स्थान पर जयपुर एक स्थान नीचे खिसक गया है ।

धर्मावलम्बी जनसंख्या

निम्नलिखित तालिका में भारत में विभिन्न धर्म मानने वालों की संख्या दिखलाई गई है–

धर्मावलम्बी	कुल जनसंख्या (दस लाख में)	कुल जनसंख्या का प्रतिशत
हिन्दू	549.78	82.64
इस्लाम	75.51	11.35
ईसाई	6.17	2.43
सिक्ख	13.08	1.96
बौद्ध	4.72	0.71
जैन	3.21	0.48
अन्य	2.77	0.42
जिन्होंने धर्म नहीं बताए	0.06	0.01
	665.31	100.00

भारत की प्रमुख भाषाएँ–

1981 की जनगणना तथा 1989 के अनुमान के आधार पर भारत में बोली जाने वाली भाषाओं में निम्नलिखित हैं, जिन्हें कम-से-कम 10 लाख व्यक्ति अवश्य बोलते हैं–

भाषा	1981 में उनके बोलने वालों की जनसंख्या (10 लाख में)	1989 के अनुमानित आंकड़े (विश्व भर में) (10 लाख में)
हिन्दी	153.71	338
तेलगु	44.71	67
बंगला	44.42	181
मराठी	41.92	63
तमिल	37.59	63
उर्दू	28.60	90
गुजराती	25.66	38
मलयालम	21.92	33
कन्नड़	21.58	40
उड़िया	19.73	30

भोजपुरी	14.35	–
पंजाबी	13.90	81
सिंधी	12.05	16
असमी	8.96	21
छत्तीसगढ़ी	6.69	–
मगधी (मगही)	6.64	–
मैथिली	6.12	–
मारवाड़ी	4.71	–
संथाली	3.69	5
कश्मीरी	2.42	4
राजस्थानी	2.09	–
बोंडी	1.55	2
कोंकणी	1.52	4
डोगरी	1.30	2
गोरखाली/नेपाली	1.29	13
गढ़बाली	1.23	2

10 लाख से अधिक बोली जाने वाली अन्य भाषाएँ पहाड़ी, भीली, उरांव, कुमाऊँनी, लम्बा, तुलू और बागरी हैं।

□□□

पाठ–7

जल–संसाधन, मत्स्य एवं जल–विद्युत

भारत जल-संसाधन में अत्यन्त धनी है । देश में बहुत बड़ी संख्या में नदियों का जाल है तथा यहाँ की जलोढ़ मिट्टी बड़ी मात्रा में नमी संचयन की क्षमता रखती है । हिमालय के पर्वत पदीय भाग में होने तथा सतपुड़ा, अरावली, पूर्वी घाट तथा पश्चिमी घाट पहाड़ियों के कारण जल-संसाधन असीम है जिनका विकास अभी बहुत कम हुआ है ।

हम जल-संसाधन को दो वर्गों में बाँटते हैं–सतही जल एवं भूमिगत जल । ये दोनों पृथ्वी के चक्रीय जल-प्रणाली के अंग हैं जिसे जलीय चक्र कहते हैं । जलीय-चक्र का आधार वर्षा है । प्रतिवर्ष वर्षा का कुछ भाग उबड़-खाबड़ भूमि एवं गड्ढों में जमा हो जाता है । यह धीरे-धीरे मिट्टी से होकर धरातल के नीचे प्रवेश करता है, तथा भूमिगत जल में बदल जाता है । जो जल धरातल के नीचे प्रवेश नहीं कर पाते नदियों के रूप में प्रवाहित होते है तथा नदी प्रणालियों में मिल जाते हैं । कुछ जल पुनः वाष्पीकरण के कारण वायुमण्डल में प्रवेश कर जाते हैं जिससे वर्षा अथवा हिमपात होता है । इस तरह जल संसाधन के सभी रूप एक दूसरे से जुड़े हुए हैं तथा एक की हानि दूसरे का लाभ होता है।

सिंचाई–जल-संसाधन का एक प्रमुख उपयोग सिंचाई के रूप में होता है । भारत की जलवायु विषम है । जहाँ एक ओर कई भाग अत्यन्त शुष्क हैं वहीं दूसरे भाग अत्यन्त आर्द्र भी हैं । मौनसून से जो वर्षा होती है उसमें भारी अनिश्चितता है । मौनसून वर्षा की अवधि 2-5 महीने हैं तथा वर्ष का शेष भाग सूखा रहता है । वर्षा की इस अनिश्चितता से सुरक्षा के लिए सिंचाई की

व्यवस्था आवश्यक हो जाती है । वर्षा से प्राप्त जल को संचित कर उसके उपयोग को नियंत्रित करना पड़ता है । भारत में परम्परागत ढंग से सिंचाई का माध्यम तालाब, कुआँ (नलकूप सहित) तथा नहरें हैं । इनमें प्रत्येक का अपना महत्त्व तथा अपनी भूमिका है । इन साधनों को विकसित कर तथा इनका सही उपयोग कर देश के ग्रामीण क्षेत्र की आर्थिक व्यवस्था को टूटने से बचाया जा सकता है तथा कृषि को विकसित किया जा सकता है जो हमारी अर्थव्यवस्था का मेरुदण्ड है ।

सिंचाई की विधियाँ–निम्नलिखित विधियों से देश के विभिन्न भागों में सिंचाई होती है–

नहर–देश के सिंचाई-साधनों में नहर द्वारा सिंचाई अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है । सैकड़ों वर्ष पूर्व हिन्दू और मुसलमान राजाओं ने कई नहरों का निर्माण कराया था । परन्तु नहर का मुख्य विकास ब्रिटिश शासनकाल में हुआ । वर्तमान समय में नहरों से कुल सिंचित भूमि का 39 प्रतिशत क्षेत्र सिंचित होता है । देश की अधिकतर नहरें उत्तर प्रदेश और पंजाब में पायी जाती है । दक्कन तथा मध्य प्रदेश में भंडारण नहर बनाए गए हैं ।

नहरें तीन प्रकार की होती है–बरसाती, स्थायी तथा भण्डारण नहरें । बरसाती नहरें सालों भर कार्य नहीं करती । वर्षा के दिनों में जब नदियों का जल-स्तर बढ़ जाता है तो इन नहरों में जल प्रवाहित होता है । स्थायी नहरें सालों भर सामान्य रूप से कार्य करती हैं तथा उनमें सालों भर जल का प्रवाह होता है । भंडारण नहर के लिए जलाशय बनाकर जल को संचित किया जाता है । जलाशय के लिए पर्वतीय एवं पठारी क्षेत्र में नदियों पर बाँध बनाये गये हैं । इन जलाशयों से नहरें निकाल कर आस-पास के क्षेत्रों में सिंचाई की जाती है । मध्य प्रदेश तथा दक्षिण के सभी राज्यों की नहरें इसी वर्ग की है ।

सिंचाई के सभी साधनों में नहर द्वारा सिंचाई सुविधाजनक, सस्ती एवं अत्यन्त कुशल है । इसके कारण कृषक फसलों का अधिकाधिक उत्पादन प्राप्त करते हैं जो अन्यथा संभव नहीं है । परन्तु यह नहीं कहा जा सकता कि नहर द्वारा सिंचाई के कुछ प्रतिकूल प्रभाव नहीं है । नहर द्वारा सिंचित क्षेत्र में पानी जमा हो जाता है तथा बहुत बड़ा क्षेत्र कृषि के योग्य नहीं रह जाता है । पानी जम जाने से मच्छड़ उत्पन्न होते हैं तथा मलेरिया जैसी बिमारियाँ उत्पन्न हो जाती हैं जो लोगों के स्वास्थ्य एवं उनकी कार्य क्षमता तथा कुशलता पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है ।

कुआँ–कुआँ द्वारा सिंचाई भी देश की सिंचाई साधनों में प्रमुख स्थान रखती है । यह छोटे खेतों में सिंचाई के लिए अत्यन्त उपयुक्त होता है । कई दृष्टि से यह नहरों की अपेक्षा अधिक लाभकारी भी है । कुआँ द्वारा जल की आपूर्ति अधिक विश्वसनीय है । इससे किसी भी भाग में पानी एकत्रित नहीं होता जैसा कि नहर सिंचित क्षेत्र में प्राय: देखा जाता है । कुएँ से देश के 48 प्रतिशत क्षेत्र (21 प्रतिशत सामान्य कुएँ तथा 27 प्रतिशत नलकूप) में सिंचाई होती है । कुआँ से सर्वाधिक सिंचाई उत्तरप्रदेश, बिहार, पंजाब, तमिलनाडू तथा महाराष्ट्र में होती है । इन राज्यों में भूमिगत जल स्तर ऊँचा है, मिट्टी हल्की है तथा भूमिगत जल की मात्रा भी अधिक है । अत: कुँआ खोदना या नलकुप लगाना बहुत आसान है ।

नलकूप द्वारा सिंचाई स्वतंत्र भारत की एक बड़ी उपलब्धि है । इसे बिजली अथवा डीजल तेल द्वारा संचालित किया जाता है । इसके परिणामस्वरूप मवेशियों का भार हल्का होता है । उत्तर-प्रदेश, बिहार और पंजाब में इसका सर्वाधिक विकास हुआ है। तथा विकसित होने की सम्भावना है । इसका एक बड़ा कारण भूमिगत जल की पर्याप्त उपलब्धि है ।

तालाब–नहर और कुओ के बाद सिंचाई साधनों में तालाब का ही स्थान है । जहाँ नहर नहीं है तथा नलकूप बैठाना भी सम्भव नहीं है, तालाब सिंचाई का एकमात्र साधन रह जाता है । मध्य एवं दक्षिण भारत में, विशेषकर आन्ध्र प्रदेश, तमिलनाडू में तालाब द्वारा सिंचाई की जाती है । यहाँ की नदियाँ बरसाती होती हैं जो गर्मी में सूख जाती हैं । भूमिगत चट्टानें ठोस एवं अछिद्रदार हैं जिसमें नलकुप गाड़ना संभव नहीं है । धरातल के उबड़-खाबड़ होने से नहरे भी नहीं निकाली जा सकती । अत: तालाब सिंचाई का एकमात्र साधन बच जाता है । देश में 8 प्रतिशत सिंचित भूमि तालबा पर निर्भर है । तालाब या तो सरकारी है या ग्रामीण समुदायों की है । तालाब द्वारा सिंचाई की कई समस्यायें होती हैं–पानी उपलब्ध नहीं हो पाता है, दूसरी समस्या तालाब को साफ रखने की आवश्यकता होती है । प्रत्येक वर्ष सिल्ट नहीं निकालने से पानी कम हो जाती है ।

पंजाब, हरियाणा, पश्चिमी उत्तर प्रदेश, आन्ध्र प्रदेश और तमिलनाडू के आंशिक भाग में निश्चित सिंचाई सुविधा है । शेष भागों में यह सुविधा कम है । 1989-90 वर्ष के अन्त तक देश में वृहत् एवं मध्य सिंचाई योजनाओं के अन्तर्गत 3.29 करोड़ हेक्टर भूमि थी तथा लघु सिंचाई के अन्तर्गत 4.68 करोड़ हेक्टर । 1990-91 में इसमें सम्भवत: 30.2 लाख हेक्टर भूमि की वृद्धि

हुई जिसमें वृहत् एवं मध्यम योजनाओं में 6.9 लाख तथा लघु योजनाओं में 23.3 लाख हेक्टर भूमि शामिल हुई । इस प्रकार 1990-91 वर्ष तक देश में सिंचाई का सम्भावित क्षेत्र बढ़कर 8.28 करोड़ हेक्टर हो गया, हलांकि केवल 7.42 करोड़ हेक्टर भूमि ही सींची जा सकी । 1991-92 में सिंचाई की वृद्धि का लक्ष्य 1990-91 की अपेक्षा 27.9 लाख हेक्टर रखा गया है परन्तु उपलब्धि के आँकड़े प्राप्त नहीं है ।

मत्स्य उत्पादन—जल संसाधन से जुड़ा एक महत्त्वपूर्ण संसाधन मत्स्य उत्पादन है । मछली भोजन का एक महत्त्वपूर्ण अंग तथा प्रोटीन का प्रमुख साधन है । अतः इसके उपयोग के मात्रात्मक तथा गुणात्मक दोनों मूल्य हैं ।

भारत में मछली मारने का कार्य समुद्र तथा देश के आन्तरिक जलाशयों दोनों में होता है । केरल तट के निकट गहरे समुद्रों से मछली पकड़ी जाती है । अन्य भागों में महाद्वीपीय मग्न-तट क्षेत्र में मछलियाँ पकड़ी जाती है । देश के आंतरिक भाग में तालाब, झील और अन्य जलाशयों में प्रमुख रूप से मछली पकड़ी जाती है । नदियों में भी कुछ मछुआरे मछली पकड़ते हैं ।

भारत में मछली पकड़ने में प्रमुख समस्या नावों की है । यहाँ मछली पकड़ने के लिए स्थानीय लोगों द्वारा छोटी छोटी नावें बनायी जाती है । यन्त्रों द्वारा संचालित नावों का पूर्ण अभाव हैं । मछलियों को संरक्षित रखने के लिए न तो शीत भंडारण की समुचित व्यवस्था है और न उत्पादित मछलियों के वितरण की ही कोई निश्चित व्यवस्था है । केवल केरल में गम्भीर सागरीय क्षेत्र में मछली पकड़ने के लिए नावें की तकनीकी की सहायता ली गई है तथा यन्त्र संचालित मदर-क्राफ्त विधि का उपयोग किया गया है । इसके अतिरिक्त यहाँ 13 इन्सूलेटेड वैन प्राप्त हुए हैं जिसका उपयोग सहकारिता के आधार पर बम्बई, मद्रास और तिरूअनन्तपुरम में किया जाता है । बंगलोर, कालीकट तथा सतपती (बम्बई) में मछलियों को सड़ने से बचाने के लिए शीत-भडारण की व्यवस्था की गई है । 1971 तक भारत में कुछ ही यन्त्र-चालित नायों का उपयोग होता था जिसकी संख्या अब बढ़कर 200 पहुँच गई है । धीरे-धीरे मछली उद्योग का आधुनिकीकरण हो रहा है जिससे इसका भविष्य उज्जवल प्रतीत होता है ।

स्वतन्त्रता के बाद मत्स्य-उत्पादन में आशानुकूल प्रगति हुई है । पिछले 4 दशकों में मछली उत्पादन पाँच गुणा बढ़ा है। 1990-91 में देश में मछली का कुल उत्पादन 38 लख टन हुंआ जबकि 1950-51 में उत्पादन मात्र 8 लाख टन था । मछली उद्योग हमारे लिए महत्त्वपूर्ण है क्योंकि एक ओर इसके अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार से विदेशी मुद्रा प्राप्त होती है तो दूसरी ओर जन जीवन के लिए प्रोटीन तथा लोगों के लिए काम मिलता है । देश के आन्तरिक भाग में मछली उद्योग को विकसित करने के लिए विशेष प्रयास किये जा रहे हैं । इसके लिए दो प्रमुख योजनाएँ कार्यान्वित की गई हैं—((i) एक्वाकल्चर विकास योजना तथा (ii) राष्ट्रीय मत्स्य बीज विकास कार्यक्रम । इसके कारण सफल परिणाम निकले हैं । विगत कुछ वर्षों में आंतरिक भागों में मछली उत्पादन बढ़ा है । 1984-85 में 9 लाख टन उत्पादन के स्थान पर 1990-91 में उत्पादन 14 लाख टन हो गया है । भारत के कुल मछली उत्पादन का यह अब लगभग 40 प्रतिशत है । 1991-92 में भारत में 40 लाख टन मछली उत्पादन की सम्भावना है । 1990-91 में मछली के निर्यात से देश में 890.4 करोड़ रुपये की आय हुई तथा 1991-92 में इसके 1,000 करोड़ को पार कर जाने की सम्भावनाए है ।

जल-विद्युत उत्पादन—जल-विद्युत भारत में ऊर्जा का एक प्रमुख साधन है । देश में बिजली के कुल उत्पादन का एक तिहाई जल-विद्युत से प्राप्त होती है ।

भौगोलिक कारक—जल विद्युत उत्पादन के लिए अनेक भौगोलिक कारकों का सुलभ होना अनिवार्य है ।

(i) सबसे महत्त्वपूर्ण भौगोलिक कारक उच्चावचन है । जल-विद्युत वहीं उत्पन्न हो सकता जहाँ नदियों के जल को गिराकर द्रुतगति से टरबाइन तक लाया जा सके ।

(ii) वर्षा ऐसी होनी चाहिए कि पानी की एक निश्चित न्यूनतम मात्रा सालों भर प्राप्त हो सके ।

(iii) जहाँ वर्षा कम होती है अथवा निश्चित नहीं है, वहाँ बाँध तथा जलाशय बनाने के लिए उपयुक्त दशाएँ हों । जिस क्षेत्र की नदियाँ ग्लेशियर से निकलती हैं उसकी जल विद्युत उत्पादन क्षमता अवश्य ही अधिक है । परन्तु ऐसी नदियाँ केवल हिमालय क्षेत्र में ही मिलती हैं, शेष भागों में जलाशय एवं बाँध निर्माण आवश्यक हो जाता है ।

जलाशय की आवश्यकता क्यों ?—भारत में वर्षा मौसमी है । प्रत्येक वर्ष सामान्य वर्षा नहीं होती । किसी वर्ष वर्षा अधिक होती है तो किसी वर्ष कम । असम एवं उत्तरी पूर्वी राज्यों, पश्चिम बंगाल तथा पश्चिमी घाट पर्वत की पश्चिमी ढाल में

वर्षा का मौसम लम्बा होता है । यहाँ शुष्क मौसम की अवधि 5-6 महीने से अधिक नहीं होती । इसका एक प्रभाव सामान्य शब्दों में यह है कि जल-विद्युत विकास में काफी कठिनाई है क्योंकि जल की आपूर्ति सालों भर समान होना चाहिए, जबकि यहाँ केवल एक मौसम में वर्षा होती है तथा नदियाँ स्थायी नहीं है । सालोंभर समान रूप से जल प्राप्त कराने के लिए कृत्रिम जलाशय का निर्माण तथा बाँध निर्माण आवश्यक हो जाता है । दूसरी समस्या यह है कि कभी-कभी वर्षा इतनी अधिक होती है कि जलाशय में अधिक पानी भर जाता है तथा जलाशय से अधिक पानी का निकास आवश्यक हो जाता है । इससे बाढ़ की समस्या बढ़ जाती है । जलाशय के लिए बनाये गए बाँध का मजबूत होना भी आवश्यक हो जाता है अन्यथा बाँध के टूट जाने की सम्भावना बढ़ जाती है । इस कारण बाँध बनाने के ऊपर व्यय इतना अधिक हो जाता है कि प्रति इकाई बिजली की कीमत बढ़ जाती है ।

जल-विद्युत के लाभ–जल-विद्युत का अन्य ऊर्जा साधनों की अपेक्षा महत्त्व एवं लाभ अधिक है ।

(i) जल-विद्युत अन्य ऊर्जा साधनों की अपेक्षा अधिक सस्ता है ।

(ii) यह परिवहन खर्च को कम करता है क्योंकि जब एक बार बिजली संचार लाइन बना दी जाती है तो वह लम्बे समय तक काम करता रहता है ।

(iii) ऊर्जा स्रोतों में जल-विद्युत अधिक दक्ष एवं कार्य-कुशल है ।

(iv) विद्युत ऊर्जा प्रदूषण मुक्त होता है

(v) जहाँ कोयला, पेट्रोलियम जैसे पदार्थों का अभाव है, यह अधिक उपयोगी होती है क्योंकि इसे बिना कठिनाई के अभाव ग्रस्त क्षेत्र तक पहुँचाया जा सकता है ।

(vi) यह कभी समाप्त नहीं होने वाला ऊर्जा का स्रोत है । अतः इसका उपयोग अधिक-से-अधिक किया जा सकता है तथा इसके संरक्षण की चिन्ता नहीं करनी पड़ती ।

जल-विद्युत के उत्पादन की कठिनाइयाँ–जल-विद्युत उत्पादन की प्रमुख समस्या मुख्यतः आर्थिक है तथा निम्नलिखित हैं–

(i) जल-विद्युत उत्पादन के लिए बाँध-निर्माण, संचार लाइन का बिछाना तथा टरबाईन और अन्य उपकरण लगाने में प्रारम्भिक खर्च बहुत अधिक पड़ता है ।

(ii) मशीन तथा अन्य उपकरण शीघ्र ही पुराने हो जाते हैं । अतः उसकी नवीनीकरण करना आवयश्क हो जाता है ।

(iii) बाँध और जलाशय का निर्माण सभी जगह नहीं किया जा सकता क्योंकि उससे भूकम्प का खतरा उत्पन्न हो जाता है, और बाँध के टूटने की प्रबल सम्भावनायें हो जाती हैं ।

(iv) टरबाइन, मशीनों, उपकरणों तथा संचार लाइन की देख-भाल निरन्तर करते रहना आवश्यक है ।

(v) जलाशय में प्रत्येक वर्ष बड़ी मात्रा में तलछट जमा होते हैं जिससे जलाशय भरने लगते हैं । अतः प्रत्येक वर्ष तटछट को निकाला जाना आवश्यक हो जाता है ।

(vi) अल्युमिनियम तथा तांबा की बिछाई गई बिजली के तार की चोरी बड़े पैमाने पर होती है । चोरी गए तारों के स्थान पर नये तार लगाने में काफी खर्च आता है तथा परेशानियाँ भी अधिक होती है ।

फिर भी भारत में जल-विद्युत उत्पादन के अनेक केन्द्र विकसित किए गए हैं । निम्नलिखित तालिका में विभिन्न राज्यों की प्रमुख जल-विद्युत परियोजनाओं को दिखलाया गया है ।

राज्य		योजना का नाम	उत्पादन क्षमता (किलोवाट में)
महाराष्ट्र	–	टाटा जल-विद्युत परियोजना	2,80,000
		कोयना जल-विद्युत परियोजना	2,40,000
कर्नाटक		शिवसमुद्रम	42,000
		शिमसा परियोजना	17,000
		गाँधी जल-विद्युत गृह (जोग-प्रपात)	72,000
		शर्वती जल-विद्युत परियोजना	1,78,200

		शर्वती जल-विद्युत परियोजना II	89,100
		तुंगभद्रा परियोजना (बायीं तट)	18,000
		काली नदी परियोजना	2,70,000
तमिलनाडु	–	पैकारा जल-विद्युत योजना	68,000
		मैटूर बाँध परियोजना (कावेरी)	48,000
		पापनाशम जल-विद्युत परियोजना	24,000
		पेरियर जल-विद्युत परियोजना	1,05,000
केरल	–	पल्लीवासल जल-विद्युत परियोजना	36,500
		तेगुलम जल-विद्युत परियोजना	4,000
		पेरिंगलकुथु जल-विद्युत परियोजना	24,000
		बम्बई परियोजना (सुवर्णगिरी)	3,00,000
		इदिक्की जल-विद्युत परियोजना	3,90,000
		कुट्टीटाडी परियोजना	75,000
आन्ध्र प्रदेश	–	तुंगभद्रा जल-विद्युत परियोजना (दाहिना तट)	36,000
		निजामसागर जल-विद्युत परियोजना	15,000
		नागार्जुन सागर परियोजना	2,10,000
		श्रीशैलम जल-विद्युत परियोजना	3,30,000
		ऊपरी सिलोरू परियोजना	1,20,000
		निचली सिलोरू परियोजना	4,00,000
आन्ध्र प्रदेश उड़ीसा	–	मचकुन्द योजना	1,30,000
		हीराकुण्ड बाँध परियोजना	2,73,000
बिहार	–	दोमादर घाटी निगम (तिलैया, कोनार, मैथन एवं पंचेत)	1,50,000
		सुवर्ण रेखा जल-विद्युत परियोजना	5,000
		कोशी बाँध परियोजना	–
पश्चिम बंगाल	–	मयूराक्षी जल-विद्युत परियोजना	400
उत्तर प्रदेश	–	गंगा नहर परियोजना	2,41,000
		पथरी जल-विद्युत परियोजना	20,000
		शारदा नहर योजना	41,000
		रिहन्द नदी घाटी योजना	2,50,000
		यमुना घाटी योजना	3,20,000
		नाता टीला योजना	30,000
		राम गंगा परियोजना	1,27,000
मध्यप्रदेश-राजस्थान	–	चम्बल घाटी योजना (सरदार सरोबर)	2,00,000
हिमाचल-पंजाब	–	भाखड़ा नांगल परियोजना	1,20,000
हिमाचल-प्रदेश	–	जोगीन्दर नगर	52,000
असम	–	अमटू परियोजना	7,500
		कुल उत्पादन क्षमता (जल-विद्युत का वार्षिक उत्पादन)	1.4 करोड़ कि० वा०

□□□

जीवन क्या है ?

(What is life)

इस भौतिक जगत में जितने प्रकार की वस्तुओं को हम देखते हैं, उनमें से कुछ सजीव, कुछ निर्जीव तथा कुछ मृत होते हैं।

सजीव हम उन्हें कहते हैं जो जीवित हैं अर्थात् जिनमें जीवन (Life) है । 'जीवन क्या है ?' यह अभी तक अपरिभाषित तथा खोज का विषय है । वैज्ञानिक आज भी इस जीवन की खोज और परिभाषा में लगे हुए हैं ।

हम अभी इतना ही कह सकते हैं कि सजीवों के अन्दर जीवन पाया जाता है जो जीवन, उनमें वर्त्तमान रासायनिक पदार्थों या यौगिकों और विशेष लक्षणों एवं गुणों द्वारा प्रकट होता है । सजीवों के ये गुण तथा लक्षण इनके दैनिक क्रिया कलापों के माध्यम से व्यक्त होते हैं ।

अत: जीवन को हम इस प्रकार से परिभाषित कर सकते हैं–

''जीवन कुछ प्रकार के रासायनिक पदार्थों या यौगिकों तथा विभिन्न प्रकार के क्रिया-कलापों का संगठन है ।''

जब यह संगठन खत्म हो जाता है तो जीवन भी समाप्त हो जाता है ।

Purkinje (1840) ने सर्वप्रथम सजीवों में वर्तमान रासायनिक पदार्थ का नाम जीव-द्रव्य (Protoplasm) रखा और Huxley (1868) ने ''जीव-द्रव्य'' (Protoplasm) को जीवन का भौतिक आधार (Physical basis of the life) कहकर संबोधित किया । सभी सजीवों का शरीर जीव द्रव्य का बना होता है ।

जीवन की विभिन्न दैनिक क्रियाओं को जीवन-क्रियायें (Life processes) या जैविकी क्रिया कहते हैं । जैसे–गति, पोषण, श्वसन, उत्सर्जन, प्रजनन आदि ।

जिसमें जीव-द्रव्य या विभिन्न प्रकार के दैनिक क्रिया-कलापों का अभाव रहता है, उसे हम निर्जीव कहते हैं ।

एक सजीव तब मृत कहलाता है जब उसकी सारी जैविक क्रियायें नष्ट हो जाती हैं ।

सजीवों के या जीवधारियों के विशिष्ट गुण एवं लक्षण (Properties of living forms)—

सभी प्रकार के पेड़-पौधे, जन्तु, सूक्ष्म-जीव आदि सजीव हैं या यों कहें उनमें जीवन है, अर्थात् वे सभी जीव द्रव्य (Protoplasm) के बने हुए हैं और अपने जीवन को आगे बढ़ाने के लिए उन्हें विभिन्न प्रकार की जैविक क्रियाएँ (Life Processes) करना पड़ता है । एक जीवन में निम्नलिखित जैविक क्रियायें होनी चाहिए–

1. **निश्चित आकार (Definite shape and size)**—प्रत्येक जीवधारी का अपना विशिष्ट निश्चित आकार होता है, उसकी अपनी एक खास लम्बाई, रूप-रंग होता है ।

उदाहरणस्वरूप विभिन्न जातियों के घोड़े होते हैं, जिनकी लम्बाई या रंग में थोड़ा बहुत फर्क हो सकता है पर एक घोड़े की रूप रंग एक गदहे से बिल्कुल अलग होती है उसी प्रकार पौधों या पेड़ में जड़, तना और पत्ते होते हैं पर आम का पेड़ पपीते के पेड़ से अलग होता है, उसकी अपनी पहचान है ।

2. **विशिष्ट संगठन (Specific Organization)**—जीवधारियों में कोशिकाओं के समूह से उत्तक, उत्तक, अंग एवं अंग से अंग-तन्त्रों के निर्माण के लिए अद्भुत संगठन है, जैसे कुछ उदाहरणस्वरूप सभी प्राणि दृष्टि अंग, श्रवण अंग और बाह्य आधार जैसे–पैर, हाथ, पूँछ आदि से युक्त होते हैं ।

पौधों में भी जड़, तना, शाखा, पत्ता, कली, फूल, फल, बीज इत्यादि ।

3. **गति (Movement)**—गति जीवन का प्रमुख लक्षण है जिसके आधार पर किसी ने जीवन की परिभाषा 'गति ही जीवन है'' (Movement is life) कहा है ।

जीवों में यह गति दो प्रकार की होती है–

(क) स्वत: गति (Spontaneous movement)—जब जीव अपनी इच्छा से एक स्थान से दूसरे स्थान को जाते हैं या अपने स्थिर स्थान पर दिशा परिवर्त्तन करते हैं या अंगों को विभिन्न दिशाओं में ले जाते हैं तो उसे स्वत: गति कहते हैं । यह गति प्राय: सभी जन्तुओं तथा निम्न श्रेणी के पौधों जैसे–वालवैक्स, क्लेमाइडोमोनस आदि में स्पष्ट देखी जा सकती है ।

(ख) प्रेरित गति (Induced movement)—जीवों में बाहरी उद्दीपनों के प्रभाव में उत्पन्न होनेवाली गतियों को प्रेरक गति कहते हैं । पौधों की जड़ों का प्रकाश के विपरीत अन्धकार, की ओर जाना, तना का प्रकाश की ओर जाना, छूने पर लाजवन्ती की पत्तियों का सिमट जाना एवं जन्तुओं में पिन चुभाने पर उत्तकों (Tissues) में संकोच एवं अंगों की हरकत आदि प्रेरित गति के उदाहरण हैं ।

जन्तुओं में दोनों प्रकार की गतियाँ पायी जाती है, पर स्वत: गति पौधे में सीमित अंश में देखी जाती है ।

4. पोषण (Nutrition)—सभी जीवधारी जीवन रखने के लिए भोजन ग्रहण करते हैं । यह भोजन शरीर का निर्माण के लिए आवश्यक पदार्थ देता है । भोजन शरीर में पचकर (घुलनशील पदार्थ बनकर) जीव-द्रव्य (Protoplasm) का अंश बन जाता है जिससे कोशिकाओं एवं अंगों का विकास एवं निर्माण होता है । इसी से टूटे-फूटे अंगों की मरम्मत भी होती है । जैसे मनुष्यों, पशु-पक्षियों तथा पौधे में पोषण के अभाव में विकास की क्रिया रुक ही नहीं जाती है बल्कि इनके शरीर में ह्रास होने लगता है तथा कुछ समय बाद वे मर जाते हैं । निर्जीवों को पोषण की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

हरे पेड़ पौधे अपना भोजन खुद निर्माण कर लेते हैं । पौधे के हरे भाग सूर्य के प्रकाश में वायु रंध्रों (Stomata) द्वारा खींचे कार्बनडायऑक्साइड जैसे जडो द्वारा शोषित जल से रसायनिक प्रतिक्रिया कर कार्बोहाइड्रेट्स का निर्माण करते हैं । इसीलिए पोधे आत्मपोषी (Autotrops) कहलाते हैं ।

5. श्वसन (Respiration)–श्वसन सजीवों का प्रमुख लक्षण माना गया है । इस क्रिया में जीवधारी अपने श्वसन अंगों द्वारा ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं । यह ऑक्सीजन कोशिकाओं (Cells) में संचित पोषक तत्त्वों का वहन करता है जिसके फलस्वरूप ऊर्जा तथा कार्बनडायऑक्साइड गैस उत्पन्न होती है । उत्पन्न ऊर्जा शारीरिक क्रियाओं के संचालन में खर्च होता है तथा कार्बनडायऑक्साइड गैस बाहर निकल जाता है । यह श्वसन क्रिया पौधों एवं जन्तुओं में अनवरत चलती रहती है तथा इसके बन्द होते ही वे मर जाते हैं ।

6. उत्सर्जन (Excretion)—जीवधारियों के शरीर में होने वाली विभिन्न रासायनिक क्रियाओं के फलस्वरूप अनेक हानिकारक पदार्थ जैसे यूरिया (Urea), यूरिक अम्ल (Uric acid) तथा कार्बनडायऑक्साइड (CO_2) आदि पदार्थ बनते हैं । अगर ये हानिकारक पदार्थ शरीर में रहें तो इससे शरीर की हानि होती है । इसलिए सभी जीवधारी इन दूषित एवं विषैले पदार्थों को शरीर से बाहर निकालते हैं, इस क्रिया को उत्सर्जन कहते हैं ।

7. उपापचय क्रिया (Metabolism)—जीवधारियों के शरीर में अनेक प्रकार की रासायनिक क्रियाएँ होती है । उन सभी क्रियाओं को एक साथ उपापचय क्रिया कहते हैं । यह क्रिया उपचय (Anabolism) तथा अपचय (Katabolism) दो भोगों में विभाजित की जाती है ।

(क) अपचय क्रिया (Anabolism)—यह निर्माण की क्रिया है जिसके फलस्वरूप शरीर में नया जीव-द्रव्य (Protoplasm) बनता है, तथा शरीर में गतिज ऊर्जा (Kinetic energy) जमा होती है । इसके फलस्वरूप शरीर में नयी कोशिकाएँ बनती हैं । अत: उपचय को पोषण की क्रिया भी कहते हैं ।

(ख) उपचय क्रिया (Katabolism)—यह विनाशकारी क्रिया है । इसमें जीव-द्रव्य के पोषक तत्त्वों का श्वसन एवं अन्य क्रियाओं से नाश होता है जिससे कोशिकाएँ टूटती-फूटती रहती है । इस क्रिया के फलस्वरूप सतत् ऊर्जा उत्पन्न होती रहती है, एवं बहुत सारे अनैच्छिक बर्ज्य पदार्थ भी बनते हैं । उसमें का उत्पन्न ऊर्जा जैव क्रियाओं के सम्पादन में लगता है तथा वर्ज्य उत्सर्जी अंगों से बाहर निकाल दिया जाता है जिसे उत्सर्जन कहते हैं ।

इसलिए उपरोक्त तीन घटनाएँ जैसे पोषण, श्वसन एवं उत्सर्जन को एक साथ हम उपापचय क्रिया कहते हैं या ये तीनों उपापचय का तीन प्रमुख घटनायें हैं ।

8. **वृद्धि (Growth)**—सजीवों में उपापचय क्रिया के अन्दर जब उपचय की गति अपचय से अधिक होती है तो शरीर में नये जीव-द्रव्य का निर्माण होता है, जिससे शरीर में नयी कोशिकाओं का निर्माण होता है जिसके फलस्वरूप शरीर के आकार और भार में तो वृद्धि नहीं होती पर इस पूरी क्रिया को वृद्धि कहते हैं । सजीवों में यह वृद्धि आंतरिक होती है । निर्जीव पदार्थों में प्राय: वृद्धि नहीं होती है । जैसे बीज से निकला पौधा प्रतिदिन बढ़ता है, अंडे से निकला शिशु नित्य कुछ-न-कुछ बढ़ता है। वहीं पत्थर की मूर्त्ति, लकड़ी, का टेबुल, अपनी बनी अवस्था के रूप में सदैव रहती है । अत: ये निर्जीव हैं ।

9. **उत्तेजनशीलता** (Irritability or Response to stimuli)—प्रत्येक सजीव में बाहरी उद्दीपनों (Stimuli) के प्रति अनुक्रिया (Response) करने की क्षमता देखी जा सकती है । इसी अनुक्रिया (Response) को उत्तेजनशीलता कहते हैं । अगर बाहरी उद्दीपन उनके जीवन के अनुकूल होते है तो वे उनके प्रति आकर्षित होते हैं, पर यदि वे प्रतिकूल होते हैं तो वे उससे भागते हैं या प्रतिकार करते हैं । पिन चुभाने पर जानवरों का अंगों का खींचना, छूने पर लाजवन्ती की पत्तियों का सिकुड़ जाना, स्वामी को देखकर कुत्ता का पूँछ हिलाना, तेज प्रकाश में आँखों का बन्द हो जाना, आदि । पौधों की अपेक्षा जन्तुओं की अनुक्रिया आसानी से पहचानी जाने वाली होती है । खटाई के नाम पर मुँह में पानी आना तथा भुख एवं प्यास लगने पर जन्तुओं को भोजन और जल की तलाश करना आंतरिक उद्दीपनों के उदाहरण हैं ।

10. प्रजनन (Reproduction)—प्रजनन जीवधारियों का वह लक्षण है जिसके अनुसार सजीव अपने जैसे जीव उत्पन्न करने की क्रिया करते हैं । प्रजनन की क्रिया कई प्रकार से होती है । इस क्रिया द्वारा जीव अपनी संख्या वृद्धि के साथ वंश परम्परा को कायम रखते हैं । जन्तुओं एवं पेड़-पौधे, सूक्ष्मधारी जीवों जैसे बैक्टेरिया (जीवाणुओं) फन्जाई (Fungi) आदि में यह क्रिया स्पष्ट देखी जाती है जिसके आधार पर हम उन्हें सजीव कहते हैं । प्रजनन की क्रियायें निम्नलिखित तरीके से हो सकती है—अलैंगिक और लैंगिक । अलैंगिक प्रजनन में एक ही जीवधारी से अनेक जीवधारी बन सकते हैं । ये भी विभिन्न प्रकार के होते हैं, जैसे–

(क) **द्विभाजन** (Binary fission)—ये ज्यादातर सूक्ष्मधारी जीवों में होता है जैसे–Bacteria (जीवाणु), अलगाई, फन्जाई, प्रोटोजोआ आदि । इनमें जीवधारी दो समान भागों में बँटकर दो सजीवों का निर्माण करता है ।

(ख) वीजाणु जनन (Spornlation)

(ग) बहुविभाजन (**Multiple fission**) आदि ।

लैंगिक प्रजनन में दो सजीवों का होना जरूरी है जिसमें एक नर और एक मादा होता हैं । ज्यादातर पौधे और जन्तुओं में लैंगिक प्रजनन होता है ।

11. **अनुकूलन** (Adaptation)—जीवधारियों में अपने वातावरण के अनुकूल ढलने की अद्भूत प्रवृति या शक्ति होती है । प्रत्येक जीवधारी अपने शरीर को वातावरण के अनुसार बदल लेता है । जिन सजीवों में अनुकलन की शक्ति का बदलाव की प्रवृत्ति अधिक होती है, वे ज्यादा सफल होते हैं, उनमें प्रजनन की शक्ति अधिक होती है वे ज्यादा दिन तक जीवित रह सकते हैं । उसमें मृत्यु-दर कम होती है ।

यह अनुकूलन जीवधारियों के बाह्य अंगों से लेकर अन्दरूनी अंगों तक में पाया जा सकता है, यहाँ तक कि उनके स्वभाव में भी बदलाव आ सकता है ।

अनुकूलन दो प्रकार के होते हैं–

(क) अस्थायी अनुकूलन (Temporary Adaptations)—जब वातावरण में अस्थायी बदलाव आते हैं तो सजीवों में भी अस्थायी बदलाव आता है जैसे शीत-निष्क्रियता (Hibernation) का मेढ़कों में आना या उष्ण निष्क्रियता (aestivation) का असमतापी प्राणियों (cold blooded animals) में आना । असमतापी प्राणियों के शरीर का तापमान वातावरण के तापमान के अनुसार घटता-बढ़ता है । अत्यन्त ठंढ या गर्म से बचने के लिये प्राणी निष्क्रिय हो जाते हैं, वे भोजन नहीं करते, और श्वसन क्रिया भी धीमी हो जाती है । पोषण के लिए संचित भोजन पर निर्भर करते हैं । अधिक ठंढे के कारण शीत-निष्क्रियता और अधिक गर्मी के कारण उष्ण-निष्क्रियता । फिर जब वातावरण अनुकूल होता है तो वे ये निष्क्रियता त्यागकर फिर सक्रिय हो जाते हैं ।

(ख) **स्थायी अनुकूलन**—सभी जीवधारियों में वातावरण के लिए स्थायी अनुकूलन होते हैं और ये अनुकूलन पीढ़ी वंशागत होते हैं ।

12. **जीवन चक्र और मृत्यु**—(Life cycle and death)—सभी जीवधारियों के जीवन में जन्म से लेकर मृत्यु तक एक निश्चित क्रम पाया जाता है जिसे जीवन चक्र (Life cycle) कहते हैं । प्रत्येक जीवधारी का जीवन अण्डकोशिक (egg-cell) से प्रारम्भ होकर भ्रूण (embryo) का रूप धारण करता है, भ्रूण से शिशु, शिशु से वयस्क, वयस्क से बूढ़ा होता है तथा अन्त में मर जाता है ।

अर्थात् प्रत्येक जीवधारी जन्म लेकर है, कुछ समय तक पृथ्वी पर जीवन व्यतीत करता है, फिर प्रजनन द्वारा अपने बच्चों को जन्म देकर मर जाता है ।

13. **जीवद्रव्य और संगठन जीवन के स्तर** (Protoplasm and Levels of Organisation of life)—सजीवों के शरीर की रचना भौतिक पदार्थों की तरह परमाणुओं (atoms) के मेल से बनी होती है । एक जीव के शरीर में बहुत से परमाणु मिलकर सरल तथा जटिल अणुओं का निर्माण करते हैं । ऐसे अणु (molecule) पुन: आपस में मिलकर कोशिका की उप इकाइयां जैसे केन्द्र (nucleus) माइटोकौन्ड्रिया, लवक (Plastids) आदि की रचना करते हैं तथा वे सभी मिलकर जीव-द्रव्य (Protoplasm) की रचना करते हैं । जीव-द्रव्य अर्द्ध-तरल, लसलसा पारदर्शक द्रव के रूप में होता है तथा एक आवरण में बन्द रहता है, इस घिरे पिण्ड को कोशिका (Cell) कहते हैं । कोशिका जीव-संगठन की प्रथम इकाई है (Unit of structure or Unit of organization of Life) । बहुत से जीवों का शरीर तो एक कोशिका का ही बना होता है तथा उनके जीवन की सभी जैव क्रियाएँ इसी स्तर में पूर्ण होती रहती हैं । बड़े जीवधारियों में इस स्तर के वाद कोशिकाओं के संगठन से उत्तको के संयोग से अंग, अंगों के संयोग से अंग प्रणालियाँ बनी होती है, जो हर स्तर पर जीवन के संगठन के भिन्न कार्यों को अलग-अलग सम्पन्न करती है । कोशिका में वर्तमान जीव-द्रव्य के जीवन का सारभूत है पदार्थ, क्योंकि सभी क्रियायें प्रथमत: इसी में सम्पन्न होती है । निर्जीवों में ये पदार्थों नहीं पाया जाता तथा मृत पदार्थों में उसका स्वाभाविक रूप और गुण नष्ट हो जाता है ।

जीवाणु और विषाणु के संबंध में प्रारम्भिक विचार (Elementary idea of Bacteria & Virus) :

जीवाणु (Bacteria) और विषाणु (Virus)—जीवाणु एवं विषाणु अत्यन्त ही सूक्ष्म जीव हैं और आँखों से दिखते नहीं हैं। इनको देखने, इनकी जानकारी हासिल करने के लिए सूक्ष्मदर्शी यंत्र (microscope) की आश्यकता पड़ती है । इसलिए इनकी पढ़ाई को माइक्रोबायलॉजी कहते हैं ।

जीवाणु का संरचनात्मक संगठन और परिचय (Introduction and Structural organisation of Bacteria)—

जीवाणु अति प्राचीन काल के हैं । इनकी रचना सरल होती है और ये प्रकृति में बहुतायत से मिलते हैं । इनके पूर्वजों के जीवाश्म (fossils) करीब 3.5 बिलियन वर्ष पुराने पत्थरों पर पाये गये हैं । करीब-करीब 2.500 प्रकार के जीवाणु अबतक पहचाने जा चुके हैं, पर उनमें से बहुतों के बारे में आवश्यक जानकारी अभी तक नहीं मिल पाई है ।

स्वभाव एवं आवास (Habit and Habital or Occurrence)—जीवाणु पानी, मिट्टी, वायु, एवं परजीवी के रूप में मनुष्य के शरीर के अन्दर पनपते हैं । जीवाणु स्वतंत्र रूप से भी पाये जाते हैं या फिर सड़ी-गली मृत पदार्थों पर भी पनपते हैं तब इन्हें मृतोपजीवी जीवाणु (Saprophytic bacterial) कहते हैं ।

जीवाणु लाभदायक एवं हानिकारक दोनों प्रकार के होते हैं । लाभदायक जीवाणु में नाइट्रोजन पैदा करने की क्षमता होती है जैसे एजेटोबैक्टर वायुमण्डल के नाइट्रोजन को अमीनोएसीड में बदलकर प्रोटीन बना लेते हैं और अपने अन्दर संचित कर लेते हैं । उनके मरणोपरान्त उनके प्रोटीन को दूसरे प्रकार के जीवाणु नाइट्रोजन में बदल लेते हैं जिसे पौधे ग्रहण कर लेते हैं । इसी तरह से लैक्टोबेसीलस नामक जीवाणु दूध में पाये जाने वाले शर्करा लैक्टोज को लैक्टिक एसिड में बदल देते हैं और दूध दही बन जाता है ।

कुछ जीवाणु खेतों की उर्वरा शक्ति को नष्ट कर हमें हानि पहुँचाते हैं । रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणु परजीवी होते हैं जो जीवित शरीर पर रहकर अपना निर्वाह करते हैं । इन परजीवियों की बहुत सी जातियाँ होती हैं । जैसे तपेदिक माइक्रोबैक्टेरियम नामक जीवाणु से होता है । कुष्ट रोग भी एक प्रकार के जीवाणु से फैलता है ।

संरचना (Structure)—जीवाणु अतिसूक्ष्म एककोशीय जीव हैं । इनकी कोशिका संरचना अति सरल एवं प्रोकेरियोटिक होती है, अर्थात् कोशिका में केन्द्रक (nucleus) अविकसित होती है, कोशिका द्रव्य (Cytoplasm) में कोशिका अंग (Cell organelless) का अभाव रहता है । केन्द्रक में एक घुमावदार (Single coiled thread) D, N, A पाया जाता है, डी० एन०

ए० (डी ओक्सो राइबोन्युक्लिक एसीड) आनुवंशिक पदार्थ है जो कोशिका द्रव्य के बीचोबीच पड़ा रहता है । केन्द्रक कला (Nuclear membrane) का अभाव रहता है । साधारण तौर पर जीवाणु कोशिका तीन स्तरीय झिल्ली से ढँकी होती है जो निम्न प्रकार की है–

1. **कोशिका-द्रव्य** (Cytoplasm)—एक पतली कोशिका झिल्ली (Cell membrane or plasma membrane) से ढँकी रहती है ।

2. कोशिका झिल्ली के ऊपर कोशिका भित्ती (Cell wall) पायी जाती है जो काफी सुदृढ़ होती है और जीवाणुओं को उनका विशिष्ट आकार प्रदान करती है । कोशिका भित्ति सेल्यूलोज की बनी होती है ।

3. कोशिका भित्ति बाहर से एक लसलसे झिल्ली से ढँकी होती है जिसे कैप्सूल (Capsule) कहते हैं । कोशिका द्रव्य में सिर्फ रिक्तिकायें (Vacuoles) पायी जाती है और कुछ राईबोसोम्स (Ribosomes) के कण इधर-उधर बिखरे पड़े रहते हैं । कुछ प्रकाश-संश्लेषित जीवाणुओं में हरा रंग या क्लोरोफिल के झिल्लीनुमा आकार पाये जाते हैं जिसे थाईलाकोयाडस (Thylakoids) कहते हैं, पर लवक (Plastids) नहीं पाये जाते हैं । इस हरे रंग के कारण ऐसे जीवाणु अपना भोजन खुद बना लेते हैं ।

आकार और परिणाम (Shape and Size)—जीवाणुओं की लम्बाई 0.2 (mierons) होती है और वे 0.5 से लेकर 1 तक मोटे होते हैं । (1μ = 1000 mm)

आकार के अनुसार जीवाणु तीन प्रकार के होते हैं–

(क) कोक्साई गोलाकार या अण्डाकार

(ख) बेसीलाई या बेसीलस (Bacilli or Bacilius)—लड़े छड़नुमा जीवाणु

(ग) स्पाईरिला (Spirilla)—सीढ़ीनुमा या घुमावदार जीवाणु

जीवाणु एक या कभी-कभी दो एक साथ भी पाये जाते हैं तब उन्हें डीप्लोकोक्साई (Diplococci) कहते हैं–या फिर एक दूसरे से जुड़कर लम्बे धागे के रूप में रहते हैं तब उन्हें स्ट्रेप्टोकौक्साई (Streptococci) कहते है ।

प्रचलन (Movement)—जीवाणु गतिहीन और गति वाले दोनों होते हैं । गति करने वाले जीवाणु फ्लैजिला के सहारे प्रचलन करते हैं । ये फ्लेजिला कोशिका-झिल्ली से निकलते हैं और कोशिका भित्ती और कैप्सूल को छेद कर बाहर निकलते हैं । फ्लैजिला चाबुक के समान लम्बे एवं जाल के समान पतले होते हैं । कुछ जीवाणुओं को एक ही फ्लैजिला होती है कुछ को दो या दो से ज्यादा ।

पोषण–पोषण के आधार पर जीवाणु दो प्रकार के होते हैं ।

(क) परपोषण या परपोषी जीवाणु (Heterotrophic)—ज्यादातर जीवाणु परपोषी होते हैं इनके कोशिका द्रव्य में क्लोरोफिल का अभाव रहता है जिसके कारण वे हर पौधे एवं फोटोसिंथेटिक बैक्टेरिया (प्रकाश संश्लेषित जीवाणुओं) की तरह अपना भोजन खुद नहीं बना सकते इसलिए इन्हें जन्तुओं या दूसरे प्रकार के पौधों पर भोजन के लिए निर्भर रहना पड़ता है ।

जीवाणुओं में प्राय: दो प्रकार के परपोषण की विधि पायी जाती है, जो निम्न हैं–

1. **मृतोपजीवी** (Saprophytic)—ये जीवाणु मृत प्राणियों के शरीर या सड़े-गले पौधों से अपना भोजन ग्रहण करते हैं ।

2. **परजीवी** (Parasitic)—ऐसे जीवाणु जीवधारियों के जीवित कोशिकाओं के अन्दर पनपते हैं और उनसे अपना भोजन ग्रहण करते हैं ।

(ख) स्वपोषी या आत्म पोषी (Autotrophic)—कुछ जीवाणु आत्मपोषी होते हैं, अर्थात् पौधों की भांति वे अपना भोजन खुद निर्मित कर लेते हैं । इनके कोशिका द्रव्य में हरित रंग की झिल्ली या थाइला कोयाड पाये जाते हैं, जिसकी मदद से ये सूर्य की रोशनी एवं CO_2 के द्वारा कार्बोहाइड्रेट का निर्माण कर लेते हैं । उदाहरणस्वरूप साइनोबैक्टेरिया (Cynobacteria) आदि ।

श्वसन (Respiration)—जीवाणु जीवधारियों की भाँति ही श्वसन करते हैं और वायुमण्डल से ऑक्सीजन प्राप्त करते हैं। ऐसे जीवाणुओं को ऑक्सी जीवाणु या ऐरोबिक बैक्टेरिया कहते हैं । कुछ जीवाणुओं को ऑक्सीजन की आवश्यकता नही पड़ती, उन्हें ऐनारोविक वेक्टेरिया कहते हैं । ऐसे जीवाणु जब ऑक्सीजन के संसर्ग में लाये जाते हैं तो वे मर जाते हैं ।

प्रजनन (Reproduction)—जीवाणुओं में अलैंगिक (Asexual) तथा लैंगिक (Sexual) दोनों ही तरह के प्रजनन पाये जाते हैं, पर अलैंगिक ही प्रजनन की प्रमुख विधि हैं । अलैंगिक प्रजनन में नर और मादा दो तरह के जीवाणुओं का अभाव रहता है ।

(क) अलैंगिक प्रजनन (Asexual reproduction) निम्ननलिखित विधियों द्वारा होता है–

द्विविभाजन या समविभाजन (Binary fission or fission)—अनुकूल परिस्थिति में जीवाणु बीचोबीच दो बराबर भागों में बँट जाता है और एक से दो जीवाणुओं का निर्माण होता है फिर ये दोनों अपने निश्चित आकार में बढ़ते हैं और फिर समविभाजन द्वारा दो भागों में बँट जाते हैं ।

(ख) लैंगिक प्रजनन (Sexual reproduction)—इसे कनजुगेशन भी कहते हैं जिसमें एक ही जाति के दो जीवाणु आपस में मिलकर एक नए ज़ीवाणु का निर्माण करते हैं और ये फिर अलैंगिक विभाजन द्वारा संख्या बढ़ाते हैं ।

विषाणु (Virus)

परिचय–

विषाणु जीवाणुओं से सूक्ष्म हैं अत: ये अति सूक्ष्म जीव है । ये पूर्णरूपेण कोशिका भी नहीं है । अति सरलतम जीव हैं। इनमें जीवित होने का प्रमाण भी संदेहास्पद है क्योंकि विषाणु क्रिस्टीलाइज्ड रूप में भी मिलते हैं जो निर्जीवों का विशिष्टगुण है । इसलिए क्रिस्टीलाइज्ड रूप में बिषाणु निर्जीव होते है और सभी विषाणु जब किसी जीवित कोशिका में प्रवेश करते है तो उनके क्रिस्टीलाइज्ड रूप में खंडित हो जाते हैं और विषाणु अपनी संख्या को प्रजनन द्वारा बढ़ाना शुरू कर देते हैं । इस स्तर पर वैज्ञानिकों को यह विवेचना कि सजीव ही प्रजनन कर सकते हैं, लागू नहीं होती क्योंकि विषाणु सजीव एवं निर्जीव के बीच की कड़ी मानी जाती है ।

विषाणुओं के केन्द्र में न्युक्लिक अम्ल D, N, A, या R.N.A पाए जाते हैं । वे न्युक्लिक अम्ल प्रोटीन के बने आवरण से आच्छादित रहते हैं । विषाणुओं को अपना इन्जाइम नहीं होता इसलिए इन्हें अपने पोषकों के इन्जाइम तन्त्र पर निर्भर रहना पड़ता है। इसी कारण विषाणु सिर्फ जीवित कोशिका के अन्दर ही प्रजनन कर सकते हैं । इसलिए इन्हें पूर्णत: परजीवी कहते हैं ।

विषाणुओं की खोज (Discovery of Viruses)—एक रूसी वैज्ञानिक इवानोस्की (1892) (Ivanosky 1892) ने जीवाणुओं की सर्वप्रथम खोज की थी । विषाणुओं की जानकारी उन्हें तब मिली जब वे तम्बाकू की 'मोजायक' बीमारी के बारे में जानकारी हासिल कर रहे थे । उन्होंने पाया कि 'मोजायक' रोगयुक्त तम्बाकू के पत्तों को निचोड़कर रस अगर पोर्सलीन के बने छन्ने से छाना जाय तब भी यह छन्ना हुआ द्रव एक रोगमुक्त स्वस्थ तम्बाकू के पत्तों को मोजायक रोग से पीड़ित कर सकता हैं । इसका कारण उन्होंने पता लगाया कि कुछ ऐसे भी सूक्ष्मजीव हैं जो जीवाणुओं से भी सूक्ष्म हैं और पोर्सलीन के बने छन्ने से आसानी से पार हो सकते हैं क्योंकि जीवाणु (Bacterial) पोर्सलीन के छन्ने से छनित नहीं होते ।

इसलिए छनित द्रव्य में पाये जाने वाले अतिसूक्ष्म जीव का नाम रखा गया वायरस जिसका अर्थ लैटिन में विष होता है इसलिए वायरस का हिन्दी नाम विषाणु रखा गया ।

स्वभाव एवं आवास (Habit and Habitat or Occurence)—विषाणु वायु, पानी या मिट्टी में एक अक्रियाशील जीव के रूप में पाये जाते हैं या स्वतंत्र रूप से जब इन स्थानों पर रहते हैं तो वे निष्क्रिय होते हैं । पर अपने जीवन को चलाने के लिए उन्हें परजीवी (Parasitic) बनना पड़ता है और एक परजीवी के रूप में किसी भी जीवित कोशिका पर पनप सकते हैं चाहे वह कोशिका जन्तुओं का हो या पौधों या फिर जीवणुओं (Bacteria) का ।

अपने परीजीवी स्वभाव के कारण विषाणु तीन प्रकार के होते हैं–

1. पौधों पर पाये जाने वाले विषाणु – प्लांट वाइरस
2. जन्तुओं पर पाये जाने वाले विषाणु – एनीमल वाइरस
3. बैक्टेरिया पर पनप्रने वाले विषाणु – वैक्टेरियल वाइरस

बैक्टेरियल वाइरस को बैक्टेरियोफेज (Bacteriophase) भी कहते हैं ।

संरचना–विषाणुओं की संरचना में पाये जाने वाले मुख्य बातें निम्नलिखित है–

(क) विषाणु अतिसूक्ष्म या अल्ट्रामाईक्रोस्कोपी जीव है इसलिए अनुवीक्षक यन्त्र से ही देखा जा सकता है ।

इनका परिणाम (Size) 20 से 300 nm नैनोमीटर होता है । एक नैनोमीटर या Milimicron = 1×10^{-9} मीटर या (.00001mm)

(ख) विषाणु गोलाकार, षट्कोण, बहुकोणीय या छड़ के सदृश आदि रूपों में पाये जाते हैं ।

(ग) एक विषाणु की इकाई को वाइरोन (Viron) कहते हैं । ये वाइरोन एक केन्द्रित स्थित में न्यूक्लिक अम्ल के एक आवरण या झिल्ली से आच्छादित होता है । यह झिल्ली केप्सीड न्यूक्लिक अम्ल का बना होता है जो विभिन्न प्रकार के प्रोटीन का बना होता है । प्रोटीन्स छोटे-छोटे टुकड़े विषाणुओं के न्यूक्लिक अम्ल या तो D. N. A होते हैं या R. N. A पर किसी भी एक विषाणु में दोनों के न्यूक्लिक अम्ल एक साथ नहीं मिलते ।

एनीमल वाइरस का न्यूक्लिक अम्ल D. N. A (डी ओक्सी राइबो न्यूक्लिक एसिड) होता है । जबकि प्लांट वाइरस R. N. A. (राईबोन्यूक्लिक एसिड) के बने होते हैं । बैक्टेरियोज भी D. N. A. के बने होते हैं ।

D. N. A. या R. N. A भी आनुवंशिक मेटेरियल होते हैं ।

(घ) विषाणुओं में कोशिका झिल्ली (Cell membrane), कोशिका द्रव्य (Cytoplasm) और कोशिकांग (Cytoplasmic organelle) का पूर्णत: अभाव होता है ।

(ङ) विषाणुओं में प्रोटीन संश्लेषण के लिए आवश्यक कोई भी कोशिकांग जैसे राइबोसोम्सय आदि नहीं पाये जाते हैं । इसके लिए विषाणु पूर्णत: अपने पोषकों (Hosts) की कोशिकाओं पर निर्भर रहते हैं ।

(च) विषाणुओं को भोजन, श्वसन और उत्सर्जन की आवश्यकता नहीं पड़ती ।

प्रजनन–विषाणु सिर्फ प्रजनन करते हैं । प्रजनन सिर्फ जीवित कोशिका के अन्दर होता है । एक बार जब विषाणु अपने पोषक की कोशिका में प्रवेश कर जाते हैं तब विषाणुओं के न्यूक्लिक अम्ल ही पोषक कोशिका में प्रवेश पाते हैं एवं प्रोटीन की बनी आवरण झिल्ली बाहर ही रह जाती है । प्रवेश के पश्चात् विषाणुओं के न्यूक्लिक अम्ल, पोषक कोशिका के कार्य को अपने अनुरूप वाले नये D. N. A या R. N. A (जैसा भी हो) बनाने का आदेश देते हैं । न्यूक्लिक अम्लों एवं प्रोटीन्स के नये विषाणुओं का निर्माण होता है ।

विषाणुओं के प्रवेश के 20 से 30 मिनट बाद पोषक की एक कोशिका नये जन्मे विषाणुओं से भर जाती है और पोषक कोशिका के फट जाने पर भी विषाणु स्वतन्त्र हो जाते हैं ।

विषाणु एवं बीमारियाँ–विषाणु सिर्फ परजीवी जीवन व्यतीत करते हैं इसलिए उनमें से अधिकांश रोग पैदा करने वाले होते हैं । इन्फ्लूएन्जा, मीजिल, पोलियो, छोटी माता, बड़ी माता, गलसुआ, मेनिनजाईटिस आदि रोग शरीर में इन रोगों के वाइरस पहुँचने पर होता है ।

सूक्ष्म जीवधारियों द्वारा होनेवाली कुछ प्रमुख बीमारियाँ (Important diseases caused by micro-organism)—

हमारा वातावरण अनेक प्रकार के सूक्ष्म जीवों से भरा है जिनके प्रभाव से हम रोग के शिकार होते रहते हैं । ये सूक्ष्मजीव, जीवाणु (Bacteria) विषाणु, प्रोटोजोआ, कवक (Fungi) आदि हैं । इनसे होने वाले सभी रोग, किसी साधन या माध्यम द्वारा रोगी व्यक्ति के शरीर से स्वस्थ्य के शरीर में पहुँचाये जाते हैं, ये संक्रामक (infections disease) रोग कहलाते हैं ।

जीवाणुओं (Bacteria) से होने वाली कुछ बीमारियाँ, उनके कारण तथा प्रमुख लक्षण–

1. **हैजा** (Cholera)—यह रोग जीवाणु विब्रियो कोलरी (Vibriocholerae) के शरीर में प्रवेश से होता है ।

ये दूषित जल तथा भोजन, धूलकण या मक्खियों द्वारा फैलाये जाते हैं ।

जीवाणु छोटी आँत को क्षतिग्रस्त कर देते हैं ।

रोग के लक्षण–रोगी को लगातार कै-दस्त एवं दस्त होने लगते हैं । पेशाब लगभग बन्द हो जाता है । शरीर में पानी की कमी हो जाती है और यूरिया का जमाव शरीर में होने लगता है । रोग बढ़ने से रोगी को मृत्यु तक हो जाती है ।

बचाव–इससे बचने के लिए शुद्ध जल तथा ताजा भोजन करना चाहिए । रोग के प्रकोप के समय इसके टीके अवश्य लगवा लेना चाहिए ।

2. **डिप्थीरिया** (Diphtheria)—श्वास नलिका की यह बीमारी जीवाणु (डिप्थीरिया) Diphtheria के चलते होता है, शैशवास्था (0-5-7) वर्ष में ही होता है । जीवाणुओं का वैज्ञानिक नाम—कौरिनेबैक्टेरियम डिफेरी (Coryenbacterium) है ।

रोग के लक्षण—इसमें शिशुओं के कण्ठ का अवरोध होता है तथा सांस लेने में दिक्कत होती है ।

रोग के प्रकार—जीवाणु रोगी के शरीर से निकले श्वास में या खाँसते वक्त, या छींकते वक्त निकलते हैं और दूसरे बच्चों में फैल जाते हैं । कभी-कभी यह बीमारी इतनी घातक होती है कि बच्चे की जान चली जाती है ।

बचाव—डिप्थीरिया एण्टीटॉक्सीन जब रोग के लक्षण आ जाने पर 12 से 14 घण्टे के अन्दर में दिया जाता है तो बीमारी से पूरी तरह छुटकारा मिल जाता है लेकिन 12 से 24 घण्टे के बाद देने पर काफी मुश्किल से जीवाणु नष्ट होते हैं और जान का खतरा बढ़ जाता है ।

रोगी को स्वस्थ्य बच्चों से दूर रखना चाहिए ।

3. **टिटनस या धनुषटंकार** (Tetanus)—इस रोग को देहातों में जमुहाँ (Lock-jaw) कहते हैं क्योंकि इसके रोगी के जबड़ बैठ जाते हैं ।

नवजात बच्चों को यह रोग अधिक होता है ।

ये बीमारी क्लौस्ट्रीडीयम टेटेनी (Clostridium tetani) द्वारा होता है । इस रोग के जीवाणु धूल, गोबर, खाद तथा लीद आदि में प्राय: पाये जाते हैं जो घाव स्थलों या कटे छिले भागों से शरीर में प्रवेश करते हैं ।

लक्षण—इनमें रोगी की मांसपेशियाँ बड़ी हो जाती है, गले और जबड़े की मांसपेशियों में ऐंठन और फिर कड़ापन आ जाता है, जिसके फलस्वरूप जबड़े बैठ जाते हैं । पूरे शरीर में जबर्दस्त ऐंठन होता है और फिर पैंटालीसीस भी, अगर इलाज न हो तो रोगी की मृत्यु हो जाती है ।

बचाव—इस रोग से बचने के लिए कट जाने पर एन्टी टिटनस की सूई लेनी चाहिए । जन्मते शिशुओं को टिटनेस ऑक्साइड की सूई दिलाने से रोग निरोधक (प्रतिरक्षी) क्षमता उनमें आ जाती है जिससे भविष्य में उसे रोग होने से बचाया जा सकता है ।

4. **कुकुर खाँसी** (Whooping Cough)—प्राय: बालकों को होने वाला श्वास-नलिका का यह रोग जीवाणु हिमोफिलीस परचूनीस (Hemophilis pertuents) द्वारा होता है ।

यह रोग, या इसके जीवाणु रोगी के खखार, थूक या कै में रहते हैं ।

जीवाणु के पनपने में करीब 10 से 15 दिन तक समय लगता है ।

इसमें बच्चा खाँसते-खाँसते कै तक कर देता है, भूख मर जाती है, खाँसने पर चेहरा लाल हो जाता है ।

बचाब—आजकल नवजात शिशुओं को टिटनस, डिप्थिरया एवं कुकुर खांसी के अवरोधक सूई एक साथ ही लगा दिये जाते हैं । ये रोग अवरोधक टीके हर तीन से पाँच साल के अन्तर पर लगवा देना चाहिए ।

5. **न्यूमोनिया** (Pneumonia)—यह फेफड़े की बीमारी है यह रोग जीवाणु डिप्लोकोकस नियूमोनी (Diplococcus pneumonia) द्वारा होता है ।

यह रोग, रोगी की छोड़ी सांस से जीवाणु वायु में मिलता है और इसका प्रसार वायु द्वारा होता है । रोगी के साथ अधिक समय तक रहने से भी स्वस्थ्य आदमी को यह रोग हो सकता है ।

बचाव—इस रोग में एन्टीबायोटिक्स पेन्सीलिन काफी लाभदायक है ।

6. **क्षय या तपेदिक** (Tuberculosis)—यह एक लम्बी अवधि वाली बिमारी है जो प्राय: फेफड़ों को हानि पहुँचाती है, पर दूसरे अंग भी प्रभावित हो सकते हैं, जैसे—अस्थियाँ, मस्तिष्क, आँत, गर्भाशय तथा लिम्फ ग्रन्थियों में भी यह रोग पनपता है।

यह रोग माइक्रोवैक्टेरियम ट्टूबरक्यूलोसिस (Mycrobacterium tuberculosis) जीवाणु द्वारा होता है ।

रोग का प्रसार—रोगी के थूक तथा छोड़े गये श्वास में रोग के जीवाणु रहते हैं । अत: रोगी द्वारा छोड़ी सांस के वातावरण में रहने एवं उनके प्रयोग किये वर्त्तनों में खाने से रोग होने की अधिक सम्भावना रहती है ।

श्वासनलिका का क्षय होने पर रोगी को लगातार बुखार, खाँसी और खखार में खून आना, सीने में असहनीय दर्द रहना और वजन घटता जाता है ।

बचाव—बाल्यावस्था में बी० सी० जी० का टीका लगवा देने से इस रोग से बचाव हो सकता है । ऐन्टिबायोटिक्स स्ट्रेप्टोमाइसीन से रोगी को काफी आराम पहुँचता है और जीवाणु धीरे-धीरे खत्म हो सकते हैं ।

7. **कुष्ट रोग** (Leprosy)—यह रोग जीवाणु बेसिलस लेप्रा (Bascillus lepra) के प्रवेश से होता है जो मक्खियों से फैलता है या रोगी मनुष्य के लगातार सम्पर्क से होता है । रोगी के थूक, नाक का स्राव तथा घावों से निकले पीव में इस रोग के जीवाणु रहते हैं ।

इसमें पूरे शरीर पर फफोले हो जाते है, त्वचा झड़ने लगती है और हाथ-पैर आदि ठूँठ होने लगता है, चेहरे कुरूप हो जाता है।

इस रोग से बचने के लिए सर्वोत्तम उपाय रोगी से अलग रहना है ।

8. **मियादी ज्वर या टायफायड** (Typhoid)—यह बीमारी लगातार बुखार रहने के कारण आसानी से पहचाना जा सकता है।

यह रोग जीवाणु सालमोनेला टाइफी (Salmonella typhee) के शरीर में प्रवेश से होता है । इस रोग से ज्वर सुबह में कुछ कम रहता है पर दिन चढ़ने के साथ ज्वर बढ़ता जाता है एवं रात्रि में उग्र रूप धारण करता है । सीने पर लाल रंग का चकत्ता, पेट पर छोटे-छोटे दाने निकल आते हैं या खुजलाहट होती है । रोगी बेचैन रहता है और अर्द्धबेहोशी की हालत में रहता है। रोग का प्रसार दूषित जल और भोजन के माध्यम से होता है जीवाणु मक्खियों द्वारा ही फैलाये जाते हैं या गन्दा खाना खाने की वजह से फैलते हैं ।

क्लोरोमाइसीटीन नामक दवा काफी आराम पहुँचाता है ।

विषाणुओं (Viruses) से होनेवाली कुछ प्रमुख बीमारियाँ—

1. **कॉमन कोल्ड** (Common Cold) – यह एक संक्रामक बीमारी है । इसमें रोगी को ठंढ लगती है, खाँसी होती है, जुकाम बढ़ जाती है ।

रोगी जब छींकता है तो इसके विषाणु नम हवा में तैरते रहते हैं । ये विषाणु जाड़े में अधिक फैले रहते हैं । अस्वस्थ मनुष्य में इस रोग के विषाणु तुरन्त प्रवेश कर जाते हैं । अधिक समय तक रोगी के साथ रहने या उसके द्वारा इस्तेमाल किये हुए तौलिए, आदि के संसर्ग में रहने से भी यह रोग ज्याद फैलता है ।

बचाब—ठंढ से बचना चाहिए, छींकने या खाँसते वक्त मुँह पर कपड़ा रखना चाहिए ।

2. **इन्फ्लूएन्जा** (Influenza)—इस रोग के लक्षण करीब-करीब 'कॉमन कोल्ड' की तरह ही होते हैं पर यह रोग शरीर में जुकाम के साथ ज्वर लाता है, जिससे पूरे शरीर में तीव्र वेदना होती है । रोगी के श्वांस से निकली हवा से इसका प्रसार होता है । अतः बचने के लिए रोगी से दूर रहना चाहिए ।

इन्फ्लुयएन्जा के विषाणु का नाम टारपीया आल्फा या बीटा (Tarpiab α and β) हैं ।

3. गलशोध (Mumps)—यह रोग बाइरस द्वारा बालकों को अधिक होता है । पर वयस्कों को भी यह रोग होता है । इसमें कर्णमूल तथा चिह्वा के नीचे की ग्रन्थियों में सूजन हो जाता है जिससे भोजन निगलने में कठिनाई होती है ।

रोगी के श्वांस तथा थूक आदि से यह रोग अधिक फैलता है । अतः प्रभावित व्यक्ति से अलग रहकर इससे बचा जा सकता है ।

वाईरस का नाम—राबुला इनफ्लेक्स (Rabula inflaxs) है ।

4. **चिकेन पौक्स** (Chicken Pox)—यह रोग विषाणु (Virus) के शरीर में प्रवेश से होता है ।

इस बीमारी में खुजलाहट के साथ दाने निकलते हैं जो लाल होते हैं, सभी दाने एक समय नहीं निकलते बल्कि थोड़े-थोड़े समय या दिन के अन्तराल के बाद आते हैं । ये दाने पूरे शरीर में निकलते हैं । दाने में पीव भर जाता है फिर उनमें पपड़ियाँ पड़ जाती है । इन पपड़ियों में रोग के विषाणु रहते हैं ।

इस रोग का प्रसार रोगी के संसर्ग में रहने से होता है या उसके द्वारा इस्तेमाल किये हुए कपड़ों या चीजों का इस्तेमाल किया जाना भी विषाणुओं के प्रवेश में सहायक होता है ।

रोगी के बदन पर दाने निकलने के दो दिन पहले से लेकर 14 दिन बाद तक विषाणुओं के प्रवेश का डर एक स्वस्थ मनुष्य में बना रहता है ।

बचाव–रोग हो जाने पर रोगी को स्वस्थ्य मनुष्यों से अलग एक कमरे में रखना चाहिए । उसके वस्त्र, खाना पीना सभी को साफ-सुथरा रखना चाहिए और जबतक सभी घाव की पपड़ियाँ झड़ न जायें और घाव सूख न जाएँ, रोगी को अलग रखना चाहिए ।

Virus के नाम–Briareusi Vareellae

5. **खसरा** (Measles or Rubeola)—खसरा बच्चों में अधिक होता है । यह विषाणुओं द्वारा होता है इस रोग के प्रकोप के पहले, रोगी को बुखार, खाँसी और भूख न लगने की शिकायत रहती है । फिर पूरे शरीर पर खुजलाहट होने लगती है, चेहरा फूल जाता है, आँखें रोशनी को बर्दाश्त नहीं कर पाती हैं ।

बचाव–बच्चों खसरे का टीका लगवा देना चाहिए ।

वायरस का नाम–ब्रायारेउस मौरबीलोरम (Briareus Morbillorum)

6. **पोलियो** (Poliomyletis)—यह प्राय: बच्चों में होने वाला रोग हैं ।

इस रोग के विषाणु ऐच्छिक माँस-पेशियों की तंत्रिकाओं (nerves) को बेकार कर देते हैं । जिसके फलस्वरूप वे कार्य करने लायक नहीं रहतीं, जैसे हाथ-पैर की मांसपेशियाँ आदि । स्पाइनल कौर्ड से तन्तु वेग (impulse) ऐच्छिक पेशियों में नहीं जा पाता और हाथ-पैर का लकवा हो जाता है ।

इस रोग के विषाणु नाक से गले के खखार से या तो फिर मल से फैलते हैं ।

बचाव–साल्क नाम का वैक्सिन इस रोग से बचाव में काफी सफल होता है । बच्चों को एन्टीपोलियों की खुराक पिलाने से भी इस रोग से बचाया जा सकता है ।

वायरस–लेजियों डेबीलीटन्स (Legio dibiltans) है ।

7. **रेबीज या हाइड्रोफोबिया** (Hydrophobia or Rabits)—यह रोग एक वाइरस के शरीर में प्रवेश के चलते होता है, जो मनुष्य में पागल कुत्ता, गीदड़, या अन्य किसी जानवर के काटने से प्रवेश पाते हैं ।

इस रोग के रोगी को सिर में काफी दर्द रहता है, रोगी पागल की तरह चिल्लाता है या फिर शांत हो जाता है । खाने में दिक्कत होती है और गले की माँस-पेशियों में अकड़न हो जाती है, गले में भी अकड़न हो जाती है और रोगी को काफी दु:खदायी मृत्यु होती है ।

बचाव–इस रोग से बचने के लिए पागल कुत्तों या जानवरों के काटने पर अस्पताल जाकर इसके टीक की पूर्ण (14) सूई लगवा लेनी चाहिए ।

प्रोटोजोआ से होनेवाली कुछ प्रमुख बीमारियाँ–

1. **मलेरिया** (Malaria)—यह बीमारी एक प्रोटोजोअन प्लाजमोडियम से होता है जिनकी चार जातियाँ मिलती हैं।

रोग के कीटाणु, मादा मच्छर एनोफिलीज के काटने से शरीर में प्रवेश पाते हैं ।

ये परजीवी मनुष्य के लाल रक्त कणों में पनपते हैं और उसे नष्ट कर देते हैं जिससे मनुष्य में रक्त की कमी के साथ-साथ काफी तेज बुखार होता है । यह बुखार ठंढ की कंप-कंपी के साथ आता है । मनुष्य का शरीर पीला पड़ जाता है ।

बचाव–रोग हो जाने पर क्लोरोकिन और त्रिमाकिन नामक औषधियाँ लेनी चाहिए । समय-समय पर रक्त जाँच करवा लेनी चाहिए । सोते वक्त मच्छरदानी का प्रयोग करना चाहिए ।

2. **अमीबायसीस या अमीबिइक पेंचिश** (Amoebiasis or Amoebic dysentry) यह बीमारी प्रोटोजोआ एण्टा अमीबा हिस्टीलाईटिका द्वारा होती है । ये परजीवी छोटी आंत या बड़ी आँत की दीवार को नष्ट कर देते हैं । इस रोग से पेट में काफी दर्द एवं ऐंठन होता है । ऐंठन के साथ अक्सरहाँ चिकना मल निकलता है जिसमें कभी-कभी रक्त भी रहता है ।

बचाव–साफ-सुथरा खाना लेने एवं ढँका हुआ पानी पीने से रोग से बचा जा सकता है । भोजन-पानी को धूल-कण से बचाना चाहिए । हाथ धोकर ही खाना पकाना और खाना चाहिए ।

फफुँदी (Fungi) द्वारा होने वाला रोग–

1. **दाद** (Ringworm)—त्वचा का यह रोग फफूँदी टीनिया (Fungus Tiniea) द्वारा होता है । इसकी शरीर पर वृद्धि

प्राय: गोलाई में होती है । इसमें तेज खुजली होती है । रोग से बचने के लिए शरीर को साफ रखना चाहिए तथा दाद के रोगी के वस्त्रों तथा वस्तुओं को प्रयोग में नहीं लाना चाहिए ।

2. एथलेट्स फूट (Athletes foot)

यह दाद की तरह ही है । पर फफूँदी ज्यादातर पाँव की त्वचा पर ही आक्रमण करती है या फिर ऊँगलियों के बीच की त्वचा पर पनपती है ।

रोग के जोवाणु (Spores) आसानी से नंगे पैरे में प्रवेश करते हैं ।

बचाव–बचाव के लिए नंगे पैर नम मिट्टी में नहीं घुमना चाहिए ।

डॉ० प्रभा रानी

□□□

पाठ–8

उर्वरक–कार्बनिक एवं अकार्बनिक

जैवीय जीवाणु (Living organism) दोनों पादप (Flora) एवं जीव-जन्तु (FaunaL) वर्गों की वृद्धि के लिए पोषक तत्त्वों की आवश्यकता होती है, तथा दोनों का जीवन एक दूसरे पर निर्भर करता है । पोषक तत्त्वों में कार्बन, ऑक्सीजन एवं हाइड्रोजन की पूर्ति वायु एवं जल से होती है, जहाँ मृदीय जल (soil water) भी महत्त्वपूर्ण है । अन्य परमावश्यक पोषक तत्वों में नाइट्रोजन (Nitrogen), स्फुर (Phosphorus) पोटाशियम, कैलसियम, मैग्नेशियम, सल्फर, लोहा (Iron), मैंगनीज, जस्ता (Zinc), ताँबा (Copper), मोलिबिडनम, बोरोन एवं क्लोरिन की आवश्यकता की पूर्ति मृदा से होती है। इसके अलावे भी पौधों के अनुसार, आवश्यक तत्त्वों में सोडियम, कोबाल्ट, मैनेडियम, सिलिकन, सेलेनियम, गैलियम, अलुमिनियम एवं आयोडिन हैं । इस तरह मृदा पादप जीव पारिस्थितिक तन्त्र (Soil plant-animal eco-system) शब्द सार्थक होता है ।

मृदा से तत्त्वों का ह्रास पौधों के अलावे रिसाव (Leaching) एवं भू-क्षरण (Soil erosion) से भी होता है । यह अनुमान लगाया गया है कि विभिन्न फसलों के द्वारा भारत में मुख्य तत्त्वों में लगभग नेत्रजन का 4.27 करोड़ टन, स्फुर का 2.13 करोड़ टन, पोटाशियम का 7.42 करोड़ टन एवं कैलशिय का 4.88 करोड़ टन का प्रतिवर्ष ह्रास (कमी) होता है। इसकी पूर्त्ति के लिए मृदा की उर्वरता (fertility) एवं उत्पादकता (Productivity) को बनाये रखने के लिए उपयुक्त प्रबन्ध हेतु फसल-चक्र (Crop rotation) के अलावे खाद (manure) एवं उर्वरक (Fertilizer) का प्रयोग अत्यावश्यक होता है, जिन्हें दूसरे शब्दों में कार्बनिक (organic) एवं अकार्बनिक या रासायनिक (Inorganic chemical) खाद भी कहा जाता है ।

कार्बननि खादों का अभिप्राय उन सभी पदार्थों से है जो कि सड़ने या गलने पर जीवांश पदार्थ पैदा करती हैं । इसकी महत्ता को पुरातनकाल से ही भारतवर्ष, चीन, एवं जापान के किसान जानते थे । वैज्ञानिक रुचि बीसवीं शताब्दी से इसके प्रति शुरू हुई, जबकि क्लिष्ट और कार्बनिक पदार्थ मृदा में उपयोग के 'पूर्व ''सिन्थेटिक ह्यूमस'' में परिवर्तित हुआ जिसके लिए सूक्ष्म जीवाणुओं के द्वारा अपघटन क्रिया मुख्य है, जिससे C/N (कार्बन/नेत्रजन) अनुपात अनुकूल बनता है क्योंकि पौधों को तत्त्वों की उपलब्धि के लिए अधिकतम C/N अनुपात 10 : 1 से 12 : 1 हैं । जीवांश पदार्थों का मुख्य स्रोत निम्नलिखित हैं–

(i) पशुशालाओं का अवशेष, जैसे, मल-मूत्र, बिछावन तथा वायोगैस प्लांट का नाद ।